चन्दामामा
फ़रवरी १९९५
RS
5

PARLE
POPPINS

अपने फ़नस्टिक्स* जमा करना शुरू करो. अभी से!

* *खुशबूदार प्लास्टिक क्रेऑन्स*

नियम व शर्तें

1. इस प्रतियोगिता में 4 से 15 वर्ष के बच्चे भाग ले सकते हैं और यह प्रतियोगिता सिर्फ भारतीय नागरिकों के लिए ही है.
2. जॉन्सन एण्ड जॉन्सन और ओगिल्वी एण्ड मेथर से जुड़े कर्मचारी व उनके सगे संबंधी इस प्रतियोगिता में भाग नहीं ले सकते हैं.
3. एक प्रतियोगी जितनी चाहे उतनी एंट्रीस भेज सकता है.
4. हर एंट्री पूरी होनी चाहिए. अधूरी व अस्पष्ट एंट्रीस को गिना नहीं जाएगा.
5. एंट्रीस प्राप्त करने की अंतिम तारीख 28 फरवरी 1995 है. पर हाँ, कंपनी, अंतिम तारीख को बढ़ाने या उसे सीमित करने का पूरा अधिकार रखती है.

चन्दामामा

फरवरी १९९५

एक प्रति : ५.००

वार्षिक चन्दा : ६०.००

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

दूरदर्शन और बच्चे

अध्ययन में साधारणतया बच्चों की अभिरुचि नहीं रह पाती, इस कारण से परीक्षाओं में वे या तो उत्तीर्ण नहीं हो पाते अथवा कम अंक पाकर उत्तीर्ण होते हैं। बताया जाता है कि इनका मूल कारण दूरदर्शन है। वे उसके सम्मुख दीर्घ अवधि तक बैठे रहते हैं और कार्यक्रमों को देखने में तल्लीन हो जाते हैं। इसीलिए तंग आकर कुछ वयस्क तथा वयोवृद्ध इसे 'मूर्ख-पेटी' कहते हैं। क्योंकि उनकी दृष्टि में दूरदर्शन में दिखाये जानेवाले कुछ कार्यक्रमों का बुरा प्रभाव अपने बच्चों तथा पोते-पोतियों पर पड़ रहा है।

इस स्थिति में कौन निर्णय करे कि कितनी देर तक बच्चों को दूरदर्शन देखना चाहिये और कौन-सा कार्यक्रम देखना चाहिये और कौन-सा नहीं। इसका निर्णय तो निश्चय ही उनके माता-पिताओं के अलावा और कोई नहीं कर सकता, करना भी नहीं चाहिये।

हाल ही में दिल्ली के सौ परिवारों में जो सर्वेक्षण हुआ, उसके अनुसार ज्ञात हुआ कि ५८ प्रतिशत बच्चे अपने माता-पिताओं के साथ दूरदर्शन देखते हैं। शेष ४२ प्रतिशत बच्चे घर के बड़ों की अनुपस्थिति में दूरदर्शन देखने में मग्न रहते हैं। यों कहें तो ठीक होगा कि वे उससे चिपककर बैठ जाते हैं। यह इसलिए संभव हो पाता है कि इस समय उनके माता-पिता और बड़े लोग घरों से बाहर रहते हैं और अपने-अपने कार्यों में व्यस्त रहते हैं। एक प्रकार से दूरदर्शन बच्चों को बिठाये रखने का साधन बन गया है। अगर माता-पिता बच्चों पर पढ़ने तथा गृह-कार्य करने पर जोर दें, उनपर दबाव डालें तो वे तुरंत उक्त कार्य में उनकी सहायता माँगते हैं।

बच्चों में नकल उतारने की प्रवृत्ति तो होती ही है। दूरदर्शन से इस प्रकृत्ति को और बढ़ावा मिलता है, जो सचमुच अवांछनीय है। खेल-कूद से उनकी अभिरुचि उचट जाती है और वे अपने मित्रों को भी भुलाकर घर में ही बैठे दूरदर्शन देखने में मग्न रहते हैं। अवश्य ही यह अस्वस्थ झुकाव ही कही जा सकती है।

इस नकारात्मक प्रभाव को दूर करने का एक उपाय है और वह है, बच्चों के लिए एक अलग चानल खोला जाए। कुछ देशों में इस प्रकार का प्रयोग भी हुआ है, जिसके द्वारा बच्चों के मानसिक तथा शारीरिक विकास के लिए अनेकों आकर्षक तथा दिलचस्प कार्यक्रम प्रस्तुत किये जा रहे हैं।

अच्छा होगा, हम भी इस दिशा में किये गये उपयोगी प्रयोगों से लाभ उठावें।

वर्ष : ४८ फरवरी १९९५ अंक : ६

एक प्रति : रु. ५/- वार्षिक चन्दा : रु ६०/-

समाचार - विशेषताएँ

हेल्मेट खोल की विजय

गत नवंबर १६ को जर्मनी में आम चुाव हुए। चान्सलर हेल्मट खोल चौथी बार इन चुनावों में विजयी हुए। १९८२ में तत्कालीन पश्चिम जर्मनी में जो चुनाव संपन्न हुए, उनमें वे प्रथम बार चुने गये। १९९२ में उभय जर्मनीयों के मिलाप के उपरांत जो चुनाव पहली बार हुए, उनमें खोल तीसरी बार विजयी घोषित हुए।

१९९४ में संपन्न चुनावों में खोल के सत्तारूढ़ दलों ने ५५ प्रतिशत मत प्राप्त किये। किन्तु इस बार भागीदार पक्षों के मात खाने से अल्प अधिकता से वे चुनाव जीत पाये। उन्हें केवल ४८.३ प्रतिशत मत ही प्राप्त हुए। विरोधी पक्षों को प्राप्त प्रतिशत मत हैं ४८.१। इसको मद्देनज़र रखकर कुछ राजनैतिक परिशीलकों का अनुमान है कि क्या खोल चार सालों तक सत्ता में टिक पायेंगे? अगर वे ये चार साल भी सत्ता में रहे, तो वे भूतपूर्व चान्सलर कोर्नाड अडिन्यूर के रिकार्ड को भी तोड़ेंगे, जिन्होंने लगातार चौदह सालों तक शासन-भार संभाला।

जर्मनी की जनता शासन में परिवर्तन नहीं चाहती। इसीलिए उन्होंने हेल्मेट के दल 'क्रिस्टियन डेमाक्रटिक तथा उसके भागीदार बनेरियनस्टियन पार्टी ' व 'लिबरल डेमाक्रटिक' को ही पुनः चुना है। राजनैतिक परिशीलकों का कथन है कि इसी उद्देश्य से जनता ने फिर से इन्ही को चुना है। उनका यह भी कहना है कि जनता ने शासकों को एक और मौक़ा तो दिया है, लेकिन अल्प आधिक्य से। अवश्य ही यह ध्यान देने योग्य है।

प्रधान विरोधी दल 'सोशल डेमाक्रटस' ने चुनावों के समय अपने घोषणा-पत्र में घोषित किया था कि अगर उन्हें शासन - भार को संभालने का अवकाश दिया जाए तो अब संसार के वर्धमान देशों को जो आर्थिक सहायता दी जा रही है, वह तक्षण ही रद्द करेगा। यह सहायता 'मिनिस्ट्री आफ एकनामिक कोआपरेशन' के द्वारा पहुँचायी जाती थी। जर्मनी से आर्थिक सहायता प्राप्त देशों में से भारत भी एक है। खोल की इस विजय से भविष्य में भी भारत को आर्थिक सहायता प्राप्त होती रहेगी।

चान्सलर हेल्मेट खोल को १९९० में प्रतिष्ठित जवाहरलाल नेहरू पुरस्कार प्राप्त हुआ, जिसे 'चन्दामामा' के पाठक (जनवरी १९९२) भली-भाँति जानते हैं।

वसूली

वीरभद्र और नारायण गाँव के बीच में स्थित चबूतरे पर बैठकर गपशप कर रहे थे। इतने में चमन नामक एक आदमी दौड़ा-दौड़ा वहाँ आया और कहा "नारायणजी, मुझपर आयी आपदा से आप ही मुझे बचा सकते हैं। मुझे तक्षण ही सौ अशर्फ़ियाँ चाहिये। दो-तीन महीनों में ब्याज के साथ लौटा दूँगा"।

"मुझे तुम्हारी ईमानदारी पर कोई शक नहीं। फिर भी बात है पैसों की। अगर तुम्हारी ईमानदारी की सिफ़ारिश गाँव का कोई प्रमुख करे, तो पैसों का इंतज़ाम हो जाएगा।" कहते हुए नारायण ने वीरभद्र की ओर देखा।

वीरभद्र ने तुरंत कहा "एक-दो दिन की शायद देरी हो, किन्तु चमन अपने वादे का पक्का है। जो रक़म लेगा, वह अवश्य ही लौटायेगा। समझ लो, रक़म तुम्हारी तिजोरी में महफ़ूज़ है।"

उसी दिन शाम को नारायण ने चमन को सौ अशर्फ़ियाँ दीं।

दूसरे दिन गली में वीरभद्र और नारायण का आमना-सामना हुआ, तो वीरभद्र ने नारायण से कहा "उस चमन के बारे में बहुत सावधान रहना। उसके पीछे-पीछे घूमते हुए तुम्हारे चप्पल घिस जाएँगे। वह इतनी आसानी से तुम्हारी रक़म लौटानेवालों में से नहीं है।"

"तो तुमने कल उसकी ईमानदारी के बारे में ऐसा क्यों कहा?" नारायण ने पूछा।

"करूँ भी क्या? दो सालों के पहले उसे बीस अशर्फ़ियाँ दी थीं। उन्हें वापस लेने के लिए मेरे पास कोई और चारा ना रहा। कल शाम को तुम्हारी दी हुई अशर्फ़ियों को लेकर जैसे ही गली में आया, मैंने उसे पकड़ लिया और बीस अशर्फ़ियाँ मय सूद के वसूल कर लिया।" कहता हुआ वीरभद्र आगे बढ़ गया।

- सेतु माधव
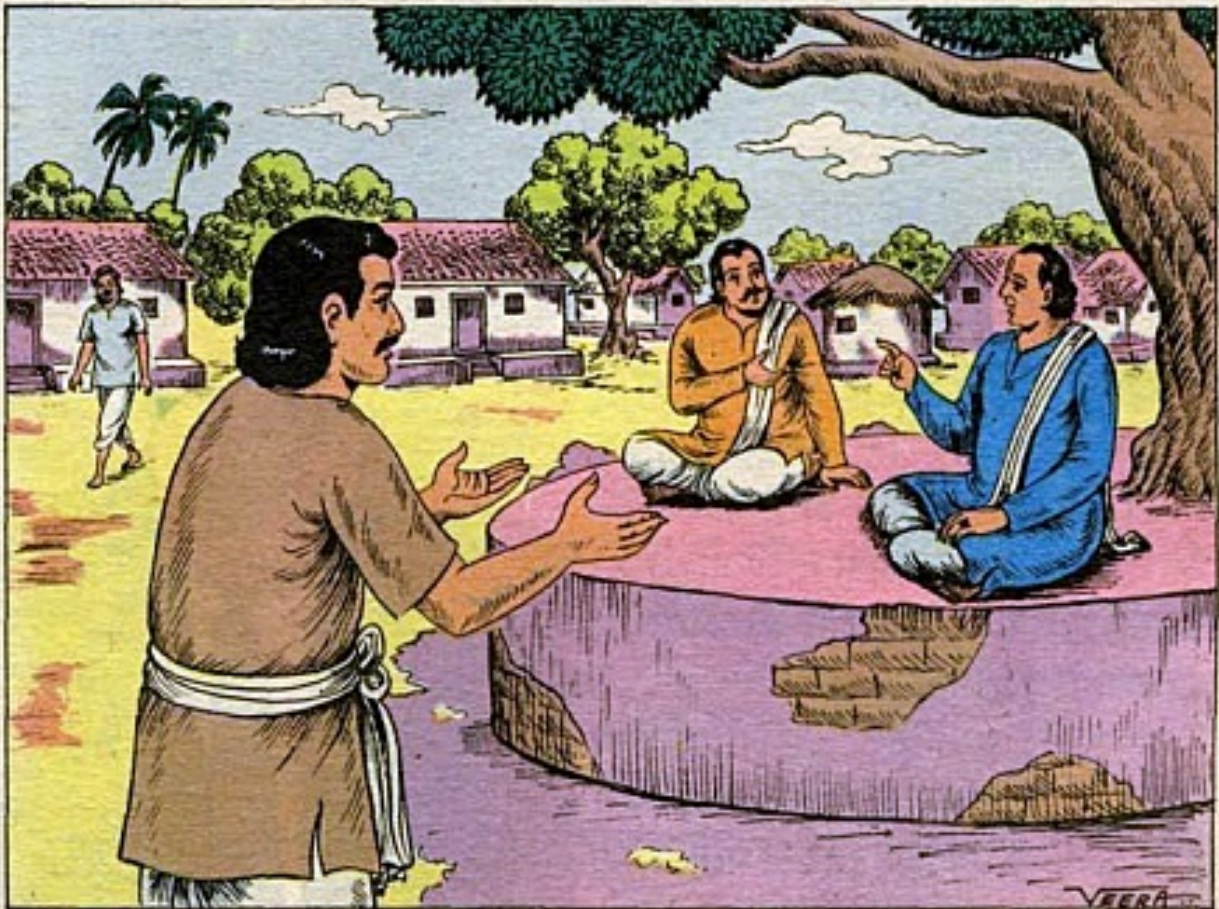
'मैं-हम'

युवक माधव रंगापुर का निवासी था। बचपन में ही उसने कितने ही शास्त्र-ग्रंथ, काव्य आदि का पठन किया था। उसके साहित्य-ज्ञान पर लोग चकित थे। वे उसकी भरपूर प्रशंसा करते रहते थे। जो भी कोई प्रश्न पूछता, उसका उत्तर वह तक्षण देता और प्रमाणित करता कि इसका आधार शास्त्र है। यों कहा जा सकता है कि उससे प्रस्तुत विवरण शास्त्र-आधारित और शास्त्र-सम्मत थे। लोग उसकी वाहवाही करने लगे, उसकी प्रशंसा के पुल बाँधने लगे। धीरे-धीरे माधव में गर्व बढ़ता गया, अंहकार भरता गया।

एक बार एक तेजस्वी सन्यासी उस गाँव में आया। ग्रामवासियों ने उसका बड़े स्तर पर स्वागत-सम्मान किया। उसके उपदेशों को लोगों ने ध्यान से सुना। वे कहने लगे कि ऐसे सन्यासी को आज तक हमने अपने जीवन में देखा ही नहीं। वे इसे अपना पुण्य मान रहे थे।

सन्यासी को देखकर और उसकी प्रशंसा सुन-सुनकर माधव में ईर्ष्या उत्पन्न हो गयी। वह अपने आप बड़बड़ाने लगा "इस सन्यासी ने क्या ऐसे महान उपदेश दे रखे हैं, जिनकी इतनी प्रशंसा हो रही है। मूर्ख जनता व्यर्थ ही उनकी प्रशंसा कर रही है। मेरा शास्त्र-ज्ञान तो इसके ज्ञान से कहीं बहुत ही अच्छा है। लेकिन ग्रामवासियों ने कभी भी मेरी इतनी प्रशंसा नहीं की"।

एक दिन माधव सन्यासी से मिला और बोला "स्वामी, आपने क्या और कहाँ तक अध्ययन किया है?"

"जब मैं पूर्वाश्रम में था, तब मेरे माँ-बाप ने बहुत प्रयत्न किये, किन्तु मैं पढ़ नहीं पाया। शिक्षित नहीं हो सका। मैने कुछ पढ़ा ही नहीं"। सन्यासी ने सच बता दिया। "तो आप उपदेश कैसे दे पा रहे हैं" माधव ने पूछा।

सन्यासी ने शांत स्वर में कहा "पुत्र, सब

राधा वात्सल्या

है और पचा भी लिया है।'' अपनी तारीफ़ आप ही करता हुआ माधव बोला।

''भाग्यवान हो तुम'' सन्यासी ने उसे बधाई देते हुए कहा। माधव एक पल के बाद फिर बोला ''भाग्यवान है तो आप हैं, मैं नहीं। आपसे अधिक ज्ञानी मैं हूँ, लेकिन क्या फ़ायदा। आपको जनता से जो आदर मिल रहा है, उसमें से एक हज़ार प्रतिशत भी मुझे मिल नहीं रहा है।''

''मैंने किसी से कहा नहीं था कि मेरे उपदेश सुनो। मैने किसी से पूछा भी नहीं था कि मेरा आदर करो। जनता' जो श्रद्धा और भक्ति मेरे प्रति दिखा रही है, उनसे मैं संतृप्त भी नहीं हूँ। मैं उनपर कोई ध्यान नहीं दे रहा हूँ। तुम भी ध्यान मत दो। याद रखना कि शिक्षित होना मनुष्य का भाग्य है''। सन्यासी ने कहा।

सन्यासी की बातों पर चिढ़ता हुआ माधव बोला ''मुझसे आप कम पढ़े-लिखे हैं। इसलिए मुझे सलाह देना आपके लिए उचित नहीं। अगर आप चाहते हों तो मुझसे चर्चा कीजिये, वादोपवाद में भाग लीजिये। मुझे पूरा विश्वास है कि मैं आपको हराऊँगा। इससे जनता में मेरे प्रति आदर की भावना और बढ़ेगी''।

सन्यासी हँसता हुआ बोला ''मैं पढ़ा-लिखा नहीं हूँ, फिर भी तुम्हारे बारे में एक बात समझ पाया हूँ। तुमने जिन शास्त्रों का अध्ययन किया है, उनको ठीक तरह से पचा नहीं पाये। किसी भी बुद्धिशाली के लिए एक गुरु की आवश्यकता

कुछ पुस्तकों में ही लिखा हुआ नहीं होता। अनुभव मनुष्य को कितने ही पाठ सिखाता है। अपने अनुभव से मैंने जो जाना, वही जनता को मैं बता रहा हूँ।''

''कुछ विद्वान लोगों ने अपने अनुभवों को लिपिबद्ध किया है। वे पुस्तकों के रूप में प्राप्त हैं। आप जो भी प्रवचन दे रहे हैं, वे उन पुस्तकों में उपलब्ध हैं। सच कहा जाए तो उससे भी अधिक विषय उनमें हैं। उन्हें पढ़ने से अधिक लाभ मिलता है या आपकी बातें सुनने से?'' माधव ने पूछा।

सन्यासी ने कहा ''उन्हें पढ़ने से अधिक लाभ होता है''। ''मैने वे सारी पुस्तकें पढ़ी हैं। उन विषयों का मैने अच्छी तरह मनन भी किया

पड़ती है। तुम भी किसी गुरु के अधीन शिक्षा प्राप्त करो, उनका मार्गदर्शन पाओ। तब तुम्हारा मन विकृत भावनाओं से दूर रहेगा और तुम शांत रह पाओगे''।

माधव नाराज़ हो उठा। उसे लगा कि वहाँ उपस्थित ग्रामीणों के सम्मुख उसका अपमान किया गया है। जब उन दोनों की बातचीत चल रही थी, तब वहाँ सचमुच ही कुछ ग्रामीण उपस्थित थे। जब सन्यासी उसे समझा रहा था, वे हँस पड़े, मानों वे माधव की बुद्धिहीनता पर ही हँस रहे हों। इसलिए वह बोला ''आप अनेकों प्रांतों में घूम चुके हैं। कृपया बताइये कि क्या ऐसा कोई गुरु है, जिसमें मुझ जैसे शिष्य का गुरु बनने की क्षमता है?''

''हाँ, हैं। मेघनाथ नामक एक पंडित हैं। वे बड़े कवि भी हैं। अपनी कविताएँ गाँव-गाँव में घूमकर स्वयं दूसरों को सुनाते रहते हैं। तद्वारा वे जानना चाहते हैं कि उनकी कविताओं में कहाँ और कैसी त्रुटियाँ हैं। उनके घूमने का यही उद्देश्य हैं। किसी दिन वे इस गाँव में भी पधार सकते हैं''। तब से माधव मेघनाथ की प्रतीक्षा में था।

एक दिन पत्नी और बच्चों समेत मेघनाथ उस गाँव में आये। ग्रामाधिकारी ने अपने घर में ही उनके रहने का प्रबंध किया। गाँव के बीच के चबूतरे पर उनके काव्य-पठन का आयोजन हुआ। मेघनाथ ने स्वरचित काव्य का पठन किया और ग्रामीणों को सुनाया।

वह एक सन्यासी की कथा थी। पढ़ाई-लिखाई में अभिरुचि ना होने के कारण राम नामक एक युवक सन्यासियों में जा मिला। सन्यासियों के संग रहकर वह सचमुच सन्यासी बन गया और शिक्षित लोगों से भी अधिक शिक्षित हो गया, पंडित हो गया, ज्ञानी बन गया।

मेघनाथ ने अद्‌भुत रूप से उस काव्य की रचना की। उसकी हर पंक्ति अर्थगर्भित थी। ग्रामीणों ने मेघनाथ की प्रतिभा की प्रशंसा की। तब माधव उठ खड़ा हुआ और बोला ''आपके काव्य से एक बहत बड़ा ख़तरा है। बिना किसी विद्या के ही कोई बड़ा हो जाए, ज्ञानी हो जाये तो हर कोई सन्यासी बनना चाहेगा। तब तो
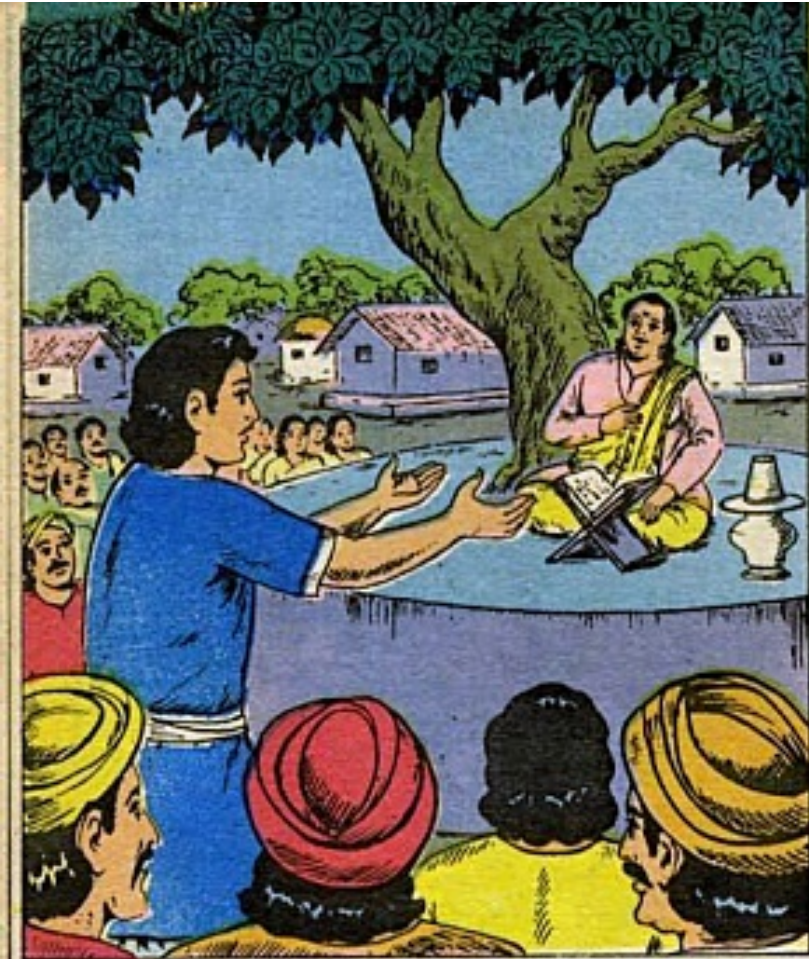
जनता के पास ना ही खाने के लिए कुछ होगा या ना ही रहने के लिए घर। स्थिति तो इतनी दुर्भर हो जाएगी कि पहनने के लिए कपड़े भी नहीं होंगे।''

इसपर मेघनाथ हँसते हुए बोले ''मानव भी एक जंतु है। क्या सृष्टि के अन्य जीव-जंतु कपड़े पहनते हैं? घर बनाते हैं? फ़सलें उगाते हैं?''

''तो क्या आपके कहने का यह मतलब है कि मनुष्य को भी जंतु की तरह जीना चाहिये?'' माधव ने पूछा।

मेघनाथ ने माधव को ग़ौर से देखा और कहा ''मनुष्य सामाजिक प्राणी है। चाहा भी तो वह जंतु नहीं बन सकता। उसी तरह वह सन्यासी भी नहीं बन सकता। इसलिए मानव के लिए भोजन, कपड़े, घर आदि कोई समस्या नहीं है''।

मेघनाथ की बातों पर ग्रामीणों ने खुश होते हुए तालियाँ बजायीं। माधव का चेहरा फ़ीका पड़ गया, लेकिन वह अपनी हार मानने के लिए तैयार नहीं था। उसने कहा ''आपको जिस बात पर विश्वास है, उसे अमल में लाइये, आचरण में रखिये। क्या आप कहना चाहते हैं कि आपके सन्यासी होने पर ही आपसे रचित काव्य का मूल्य आँका जाएगा''।

''इस विषय के बारे में मैंने सोचा - विचारा है। मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि सन्यासी होने का मतलब यह नहीं कि अपनी पत्नी और संतान का त्याग कर दूँ। उनसे विरक्त होकर किसी कोने में बैठ जाऊँ और जप-तप करूँ। मेरी दृष्टि में इसकी कोई आवश्यकता नहीं है। हमें तो चाहिये कि अहंकार, कीर्ति की आकांक्षा, तथा स्वार्थ त्याग दें।'' मेघनाथ ने कहा।

उसके उत्तर में माधव ने कहा ''तब नये-नये काव्यों की रचना आप क्यों कर रहे हैं? आप तो यही चाहते हैं ना कि काव्य-रचना के रचनाकर के रूप में आपकी प्रसिद्धि हो, हर कहीं आप ही का गुण-गान हो। इससे क्या आपके स्वार्थी होने का प्रमाण नहीं मिलता। आपके पहले भी बहुतों ने काव्यों की रचना की थी। आपको तो चाहिये कि उन काव्यों के बारे में जगह-जगह घूमकर लोगों को बताते रहें। मेरा तो अभिप्राय है कि यश पाने के लिए ही

आप इस प्रकार अपने काव्य का प्रचार करते हुए जगह-जगह घूम रहे हैं"।

मेघनाथ उसके तर्क से थोड़ा भी घबराये नहीं। वे बोले "मैने जिस काव्य की रचना की, उसपर उसके रचनाकार का नाम ना हो तो मेरी दृष्टि में वह असत्य है। श्रीरामचंद्र किसी दूसरे के नाम पर शासन चलाते या कालिदास अपना नाम ना देकर किसी दूसरे के नाम पर काव्य रचते तो वह अवश्य ही असत्यपूर्ण होता। उनकी गणना उनमें होती, जिन्होंने आनेवाली पीढ़ियों को झूठ बताया, सत्य से दूर रखा, गुमराह कर दिया। इतिहास में हमारी आस्था हैं, उसके प्रति हम अपना कर्तव्य निभाना चाहते है, उसके साथ हम न्याय करना चाहते हैं, इसीलिए अपने ही नाम से हम काव्य-रचना करते हैं। अब रही प्रचार की बात। अगर हम कवि अपनी रचना को किसी राजा को समर्पित करेंगे तो हमें लाखों अशर्फ़ियाँ पुरस्कार के रूप में मिल सकती हैं और हमारा नाम भी शाश्वत हो सकता है। हममें यश पाने की आकांक्षा नहीं है, इसीलिए गाँव-गाँव में घूमकर हम काव्य-पठन करते हैं और ग्रामीणों को सुनाकर उनके विवेक को जगाते हैं, उनकी बुद्धि को पैनी करते हैं। केवल यश प्राप्त करने के लिए सपरिवार घूमते रहना कष्टदायक चेष्टा है। इससे प्राप्त होनेवाला आर्थिक फल भी शून्य है। अब तुम शायद पूछोगे कि तो फिर नये काव्यों की रचना करने की क्या आवश्यकता है? सृष्टि के आरंभ में मनुष्य नंगा घूमता था। उपरांत उसने पत्तों को शरीर से ढ़क लिया। हम तो अब रेशमी कपड़े भी पहन रहे हैं। समयानुसार जिस तरह वस्त्र-धारण में परिवर्तन होते गये उसी तरह मनुष्य की अभिरुचियों तथा उसके जीवन के प्रति दृष्टिकोणों में भी परिवर्तन होते आये हैं। तदनुसार नये कवियों का तथा नये काव्यों का आविर्भाव होता है। अगर तुम जानना चाहते हो कि नये काव्य क्यों लिखे जाने चाहिए, तो इसके लिए तुम्हें कवि बनना होगा। नहीं तो हमारे काव्यों को पढ़ना होगा।"
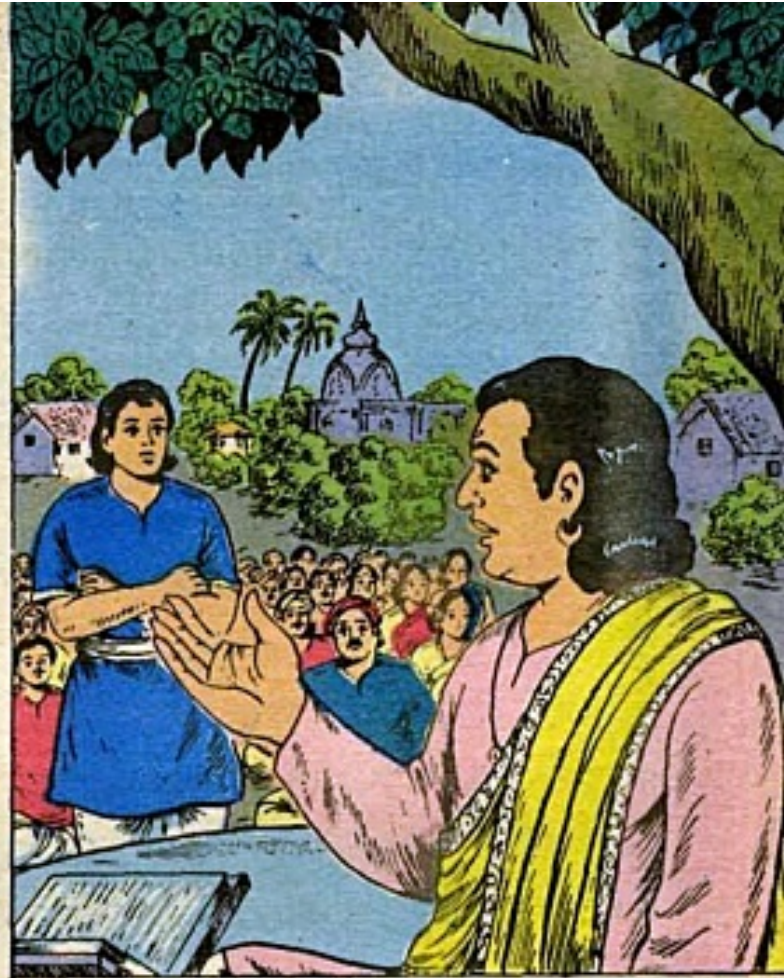
मेघनाथ के दिये गये विवरण को सुनकर माधव सन्नाटे में आ गया। बहुत-सी बातों का इतना विश्लेषणात्मक अध्ययन उसने आज तक

कभी नहीं किया। उसने सोचा तक नहीं कि किसी विषय को इतने कोणों से सोचा जा सकता है। उसे लगा तो अवश्य कि मेघनाथ असाधारण व्यक्ति-विशेष हैं, फिर भी उनसे और सवाल करके ग्रामीणों के सामने अपनी मेधा-शक्ति का प्रदर्शन करना चाहता था।

मेघनाथ ने जब भी कोई बात की तो उन्होंने बार-बार 'मैं' के बदले 'हम' का उपयोग किया। 'मैं' विनय का सूचक है, तो 'हम' अहंकार का सूचक। इसका अर्थ यह हुआ कि मेघनाथ अहंकारी है। उसने दोनों हाथ जोड़कर बड़े विनय से मेघनाथ को संबोधित करते हुए कहा "आप साधारण व्यक्ति नहीं, असाधारण व्यक्ति हैं। लेकिन जब-जब आपने अपने काव्य की बात की, तब-तब आपने 'हम' शब्द का उपयोग किया। आप कहते रहे 'हम' ने लिखा, 'हम' ने कहा। जनसाधारण इसे आपका अहंकार मान सकते है। मेरा एक शक है। आप एक नहीं होंगे, दो या तीन होंगे, इसीलिए आप बारंबार 'हम' कहते रहे"।

मेघनाथ बोले "हाँ पुत्र, सरस्वती का आशीर्वाद प्राप्त मेघावती मेरी पत्नी है और मैं इसे अपना भाग्य मानता हूँ। मेरा असली नाम रंगनाथ है। हर काव्य हम दोनों मिल-जुलकर रचते हैं। दोनों के नामों के जुड़ने पर मेघनाथ हुआ। मेघनाथ एक नहीं, दो हैं"।

माधव हक्का-बक्का रह गया और हाथ जोड़कर कहा "मुझे क्षमा कीजिये"।

मेघनाथ मुस्कुराते हुए बोले "ऐसी स्थिति में कभी ना फँसना, जहाँ तुम्हें दूसरों से क्षमा की भिक्षा माँगनी पड़ती हो।" ईर्ष्या तथा अज्ञान के कारण तुमने मुझे नीचा दिखाना चाहा, किन्तु इससे तुम्हारा पतन ही हुआ है, उथ्थान नहीं। तुम्हारी इस चेष्टा से ही मैं बड़ा बना। इसमें मेरा कोई बडप्पन नहीं। जो मानव अकारण ही दूसरे का अपमान करना चाहता हो, उसे नीचा दिखाना चाहता हो, वह स्वयं नीचे गिर जाता है और दूसरा मानव आकाश जैसा ऊँचा और विस्तृत बन जाता है।" मेघनाथ ने कहा।

माधव ने अपनी हार मान ली। उसका अहंकार दूर हो गया।

(मोहन भुवनसुंदरी को ले गया था। ग्रीक के राजा नहीं चाहते थे कि इसके लिए युद्ध छिड़ जाय। उन्होंने समझौते के लिए दूत भी भेजे। किन्तु उनके प्रयत्न विफल हुए। भुवनसुंदरी के पति प्रताप ने ग्रीक के सब राजकुमारों को निमंत्रण दिया कि वे ट्रोयनगर पर हमला करने में उसका साथ दें, सहायता करें। उन सबको एक साथ जुटाने में मोहन को कई तक़लीफ़ों का सामना करना पड़ा। रूपधर ने पागल का नाटक किया तो वज्रकाय औरत के वेष में राजा के अंत:पुर में छिप गया। इतना सब कुछ होने के बावज़ूद ग्रीक सेनाएँ युद्ध के लिए सन्नद्ध हुई और ट्रोयनगर पहुंचीं।)

ज्योतिष-शास्त्रज्ञ बता चुके थे कि जो व्यक्ति सर्वप्रथम ट्रोय की भूमि पर क़दम रखेगा, उसकी मृत्यु निश्चित है। चंद्रप्रभु ने इस भविष्य-वाणी की पहवाह नहीं की और वह पहले पहल जहाज़ से कूद पड़ा। जहाज़ से कूदनेवाला दूसरा था वज्रकाय। उसके पीछे-पीछे ग्रीक की सेनाएँ उतरीं और युद्ध के लिए सन्नद्ध हो गयीं।

ट्रोजन में मराल नामक एक वीर था। वह ना ही तलवार की चोट से मर सकता है या ना ही बर्छी के चुभने से। उस मराल ने पहले ही दिन युद्ध में कितने ही ग्रीक योद्धाओं को मौत के घाट उतारा था। वज्रकाय ने मराल का सामना किया और उससे घमासान लड़ाई लड़ी। बहुत देर तक लड़ाई होती रही, पर मराल ने अपनी हार नहीं मानी। ठोकर खाने के कारण जब मराल नीचे गिर गया, तब वज्रकाय उसपर झपट पड़ा, उसकी छाती पर बैठ गया और उसका गला घोंटकर उसे मृत्युलोक पहुँचा दिया।

विजय नहीं पा सकेगा। वर्धन को अपने इस पुत्र पर बहुत ही गर्व था। उसने उसे बचपन से ही अनेकों युद्ध-विद्याएँ भी सिखलायीं। क्योंकि देश का भविष्य और सुरक्षा उसी के हाथ में होगे। वह जब बीस साल का हो जाएगा, तब शत्रु उसके देश की ओर झाँककर भी देखने का साहस नहीं करेंगे। नागरिक भी इलिय को बहुत चाहते थे। उसके बल-पराक्रम को देखकर वे दाँतों तले उँगली दबाते थे। किन्तु होनी को कौन टाल सकता है?

इसलिए वज्रकाय ने संकल्प किया था कि किसी तरह इलिय का अंत कर देना चाहिये। एक दिन इलिय मंदिर के प्राँगण में घुड़सवारी कर रहा था। वज्रकाय वहाँ गया और उसने इलिय को वर्छी से भोंककर मार ड़ाला। इलिय की मौत से ट्रोय के नागरिक बहुत दुखी हुए। उन्होंने उसपर बड़ी-बड़ी आशाएँ बाँध रखी थीं। लेकिन उसकी मौत से उनकी आशाओं पर तुषारापात हो गया। किसी ने सच कहा कि आदमी सोचता कुछ है तो भगवान करता कुछ और है।

वर्धन के पुत्रों में से वृकाक्ष एक था। बग़ीचे के पेड़ों की शाखाओं को तोड़कर वह रथ के पहियों के लिए आवश्यक लकड़ियाँ छील रहा था। रात के समय वज्रकाय छिपे-छिपे नगर में पहुँचा और बग़ीचे में गया, जहाँ वृकाक्ष काम पर लगा हुआ था। उसनेउसे पकड़ लिया और अपने शिबिर में ले गया।

ग्रीक नेता निर्णय नहीं कर पाये कि इस

मराल के मरते ही ट्रोजन की सेनाएँ ड़र के मारे तितर-बितर हो गयीं और पीठ फेरकर ट्रोय नगर की ओर भाग गयीं। उसके बाद ग्रीकों ने अपने जहाज़ समुद्री तट के एक सुरक्षित स्थान पर रोके और ट्रोय नगर की दीवारों के बाहर घेराव कर दिया। यह घेराव दस सालों तक चलता रहा। नौ वर्षों तक कोई खास लड़ाई तो नहीं हुई, किन्तु अनेकों अन्य घटनाएँ घटीं।

ट्रोय के राजा वर्धन की दो पत्नियाँ थीं। मोहन की माँ उसकी दूसरी पत्नी थी। उसके पचास पुत्रों में से उन्नीस पुत्र उसी के थे। उनमें से ज्येष्ठ पुत्र था वीरसिंह। उसके पुत्रों में से इलिय भी एक था। दैवज्ञों ने कहा था कि इलिय बीस साल का हो जायेगा तो ट्रोय नगर पर कोई

क़ैदी को क्या करना है। उसे एक राजा का गुलाम बनाकर बेच डाला। उस राजा के दरबार के किसी दरबारी ने उसपर सहानुभूति दिखायी और धन देकर उसे राजा से खरीद लिया। यों उसे गुलामी से विमुक्त किया। वृकाक्ष जब ट्रोय नगर लौट रहा था, तब रास्ते में वज्रकाय ने उसे देखा और वहीं का वहीं उसे मार डाला।

वज्रकाय ने इस प्रकार के अनेकों कार्य किये। युद्ध तो चल नहीं रहा था। ग्रीक सैनिकों के पास कोई काम भी नहीं था। इसलिए वज्रकाय ने ग्रीक सैनिकों के एक दस्ते को लेकर ट्रोय नगर के आसपास के प्रदेशों को लूटना प्रारंभ कर दिया। जब वे ऐडा पर्वत पर पहुँचे तब वहाँ प्रशंसन नामक एक व्यक्ति से उसकी भेंट हुई।

प्रशंसन मोहन के ही वंश का था। मोहन जब भुवनसुँदरी को ले आने स्पार्टा नगर गया था, तब वह भी उसके साथ था। उस समय उसने मोहन की काफ़ी मदद की थी। फिर भी भुवनसुंदरी को लेकर ग्रीकों व ट्रोजनों में जो युद्ध छिड़ा, उसमें वह तटस्थ ही रहा। ना ही उसने युद्ध में भाग लिया और ना ही उसकी सेनाओं ने।

प्रशंसन ऐडा पर्वत पर चरवाहों के साथ था। उस समय वज्रकाय और उसके सैनिक वहाँ आये। वज्रकाय की शक्ति के सामने उसकी दाल ना गली, इसलिए पर्वत से उतरकर भाग गया। वज्रकाय प्रशंसन के पराक्रम के बारे में सुन चुका था। वह जान गया था कि प्रशंसन भविष्य में उसके लिए ख़तरा साबित हो सकता है। उसे यह भी मालूम हुआ कि वह शांत स्वभाव का है, लेकिन उसकी शांति में खलल पहुँचाने पर शत्रु

महावीर है। अब रहा, ट्रोय के सैनिकों का रुख। वे अपने पक्ष के वीरसिंह को जितना मानते थे, उतना ही प्रशंसन को भी मानते थे। उतना ही उसका आदर करते थे। युद्ध में अनेकों बार वह घायल हुआ और हर बार मरते-मरते बच गया।

इस युद्ध में प्रशंसन की मृत्यु लिखी हुई नहीं थी। लिखा हुआ तो यह था कि उसके वंशज भविष्य में ट्रोय नगर के राजा बनेंगे।

बहुत-से ऐसे और नगर भी थे, जिनका ट्रोय नगर के साथ मैत्री के संबंध थे। उनमें से बहुतों को वज्रकाय ने हराया और अपने अधीन कर लिया। जो नगर वज्रकाय के अधीन हुए, उनमें से वीरसिंह के ससुर का नगर भी था। वह और उसके सातों पुत्र युद्ध में मारे गये।

पर पिल पड़ेगा और उसका सर्वनाश करेगा। इसीलिए उसने उसे सदा के लिए सुला देना चाहा। इस आकस्मिक आक्रमण के सामने प्रशंसन अपने को संभाल नहीं पाया और उसे भागना पड़ा। ग्रीकों ने प्रशंसन के चरवाहों को मार डाला और पशु-संपदा को अपने अधीन कर लिया।

इस घटना के बाद प्रशंसन से तटस्थ रहा ना गया। वह तुरंत अपनी सेनाओं को ट्रोय नगर ले गया और युद्ध के लिए कटिबद्ध हुआ। प्रशंसन अद्भुत योद्धा था। वज्रकाय ने किसी की परवाह नहीं की, उसकी दृष्टि में शत्रु-पक्ष का कोई भी अजेय नहीं था। लेकिन प्रशंसन के बारे में वह चौकन्ना था, क्योंकि वह जानता था कि वह एक

ग्रीकों के शिबिर में कुछ भयानक घटनाएँ घटीं। उनमें से एक यों है। एक बार राराजा ने रूपधर को बुलाया और कहा, "जाओ, और जहाज़ से धान ले आओ"। राराजा के आज्ञानु-सार रूपधर धान लेने गया लेकिन खाली हाथ लौट आया। उसे जहाज़ तक पहुँचने में कई तक़लीफ़ों का सामना करना पड़ा। शत्रु-सेना ने उसे घेर लिया। मरते-मरते वह अपने को बचा पाया। उसने वापस लौटना ही उचित समझा। राराजा की आज्ञा को वह कार्यान्वित नहीं कर पाया। ग्रीक वीरों में से प्रबोध नामक एक वीर ने रूपधर से कहा "तुम बहुत ही सुस्त हो, कायर हो"।

"मुझसे कोई ग़लती नहीं हुई। मैं जहाज़

तक जा नही पाया। रराजा मेरे बदले तुम्हें भेजते तो तुम भी खाली हाथ लौटते'' रूपधर ने कहा।

प्रबोध में रोष जगा। उसी वक़्त एक नौका लेकर वह निकल पड़ा और उसमें धान भरकर ले आया। यों रूपधर का पराभव हुआ। उसने प्रबोध से बदला लेना चाहा। अपमानित करने के अपराध में उससे प्रतिशोध लेना चाहा। इसके लिए उसने एक योजना बनायी। एक दिन रूपधर ने रराजा को यों समाचार भेजा ''कल रात को सपने में देवता प्रत्यक्ष हुए और उन्होंने मुझसे कहा कि हमारे शिबिर में बहुत बड़े स्तर पर विद्रोह होनेवाला है। उन्होंने मुझे सावधान किया और कहा कि एक दिन और एक रात के लिए हमे अपने शिबिर बदलने होंगे''।

रूपधर की इस चेतावनी को रराजा अमल में ले आया। सारे के सारे ग्रीकों ने अपने-अपने शिबिर छोड़ दिये और एक दिन और एक रात तक दूसरी जगहों पर रहे। शिबिर जब खाली-खाली थे, तब रूपधर छिपके प्रबोध के शिबिर में पहुँचा और वहाँ सोने की अशर्फियों की एक थैली छिपा रखी।

इसके बाद एक युद्धक़ैदी को पकड़कर उसने उससे ज़बरदस्ती एक ख़त लिखवाया। मानों यह ख़त वर्धन ने प्रबोध के नाम लिखा हो। उसमें लिखा हुआ था ''ग्रीकों के विरुद्ध विद्रोह करने के लिए तुमने जो सोना माँगा, वह सोना भेज रहा हूँ''। रूपधर ने उस युद्धक़ैदी से कहा कि ''यह ख़त ले जाओ और प्रबोध को दो''। क़ैदी प्रबोध को यह ख़त सौंपे, इसके पहले ही रूपधर ने अपने आदमियों से उसे मरवा डाला।

दूसरे दिन सबेरे जब ग्रीक अपने पुराने शिबिरों में लौट रहे थे, तब शिबिरों के बाहर उन्होंने एक युद्धक़ैदी की लाश पायी। उसके पास जो ख़त था, वह भी उन्हें मिल गया। ख़त का विषय पढ़कर उन्हें लगा कि यह गंभीर विषय है। उन्होंने तुरंत वह ख़त रराजा को दिया।

रराजा ने ख़त पढ़ा और पूछ-ताछ के लिए प्रबोध को बुलवाया। उसने प्रबोध से क़ैफ़ियत तलब की और पूछा कि ऐसा ख़त वर्धन से तुम्हारे नाम पर कैसे आया? उसने बताया ''मैं देश-द्रोही नहीं हूँ। वर्धन ने या उसके आदमी ने कभी

भी मुझे सोना नहीं दिया।'' रूपधर ने कहा ''सच और झूठ का पता उसके शिबिर को ढूँढ़ने से लग जायेगा''।

शिबिर ढूँढ़ा गया। वहाँ सोना मिला। प्रबोध द्रोही क़रार कर दिया गया। सब सैनिकों ने मुक्त कंठ से घोषणा की कि ऐसे विद्रोही को पथ्थरों से मारकर यमलोक भेजना है। उसी प्रकार ग्रीकों ने उसे पथ्थरों से मार डाला। मरने के पहले प्रबोध कहता रहा ''ऐ सत्य, मेरी आँखों के सामने ही तुम्हारी मृत्यु हो गयी?''

प्रबोध को दिया गया दंड हर प्रकार से अवांछित व अक्रम था। वह निर्दोषी तो था ही, बड़ा पराक्रमी और प्रतिभावान भी था। ट्रोय नगर को घेरे हुए सैनिकों के मनोरंजन के लिए उसने पासों की सृष्टि की। उसने कितने ही और नूतन वस्तुओं की सृष्टि की। उसी ने दीपस्तंभों का आविष्कार किया था। सैनिक शिबिरों में तथा अन्य स्थलों पर पहरा देनेवालों को नियमबद्ध करने की सोच भी उसी की थी। ग्रीक-वासी कितनी ही बातों में उसके ऋणी थे।

ग्रीक में रहते हुए प्रबोध के पिता को अपने पुत्र की मरण-वार्ता मिली। वह ट्रोय नगर निकल पड़ा और पहुँचने के बाद उसने राराजा से पूछा ''मेरा पुत्र क्यों मारा गया? आपने कैसे साबित कि वह गद्दार है?''

राराजा ने उसे क़ैफ़ियत देने से इनकार कर दिया। जिस काम पर प्रबोध का पिता आया, वह काम हुआ नहीं। वह ग्रीक लौटा और ग्रीक वीरों की पत्नियों को संबोधित करते हुए उसने कहा ''तुम्हारा पति ट्रोय नगर की कन्या से विवाह रचाके उसे अपने साथ ला रहा है। भविष्य में वही उसकी रानी बनेगी।'' उसके कथन में सच्चाई नहीं थी, झूठ ही झूठ था। यह सुनकर कुछ ग्रीक धर्मपत्नियों ने आत्महत्या कर ली।

कुछ स्त्रीयाँ बेहोश हो गयीं तो कुछ स्त्रीयाँ निराश। वे अपने पतियों के आगमन की बड़ी बैचैनी से प्रतीक्षा कर रही थीं। इस समाचार ने उन्हें झकझोर दिया कि वे दूसरी औरत से शादी करके घर लौट रहे हैं। उन्हें क्या पता कि प्रबोध का पिता क्रोध में बक रहा है। प्रतीकार की आग में जलता हुआ उन्हें उकसा रहा है।

-सशेष

सोनाराम की भूल

हेलापुरी का निवासी सोनाराम बड़ा धनी है। उसने अपना व्यापार अपने बेटों के सुपुर्द किया और सुख-चैन से चार मंज़िलोंवाले भवन में दिन गुज़ारने लगा।

एक दिन सोनाराम भवन की दूसरी मंज़ल के मुँडेर से नीचे गिर गया। पैर को चोट पहुँची और अब इलाज कराने में लगा हुआ है। यह बात उसके दोस्त माधव को मालूम हुई।

माधव अपने दोस्त से मिला और कुशल-मंगल पूछने के बाद पूछा "ऐसी असावधानी क्यों बरती? चार-पाँच फुट के मुँडेर से नीचे गिर गये, यह तो बड़े ताज्जुब की बात है।"

"माधव, क्या बताऊँ? जो हुआ, उसपर मुझे दुख हो रहा है और आश्चर्य भी। जैसे ही रात को भोजन करता हूँ, पान खाता हूँ। मुँडेर पर से उसे थूक देता हूँ और खाट पर आकर सो जाता हूँ। यह मेरा दैनिक कार्यक्रम है। लेकिन जिस रात को यह घटना हुई, उस समय किसी सोच में लगा हुआ था। खाट पर थूक दिया और मुँडेर से कूद पड़ा।" दर्द से कराहते हुए सोनाराम ने कहा।

यह सुनकर माधव ठठाकर हँसता रहा। उसे इस बात का भी स्मरण नहीं था कि उसका दोस्त उसकी इस हँसी का शायद बुरा माने।

- भास्कर
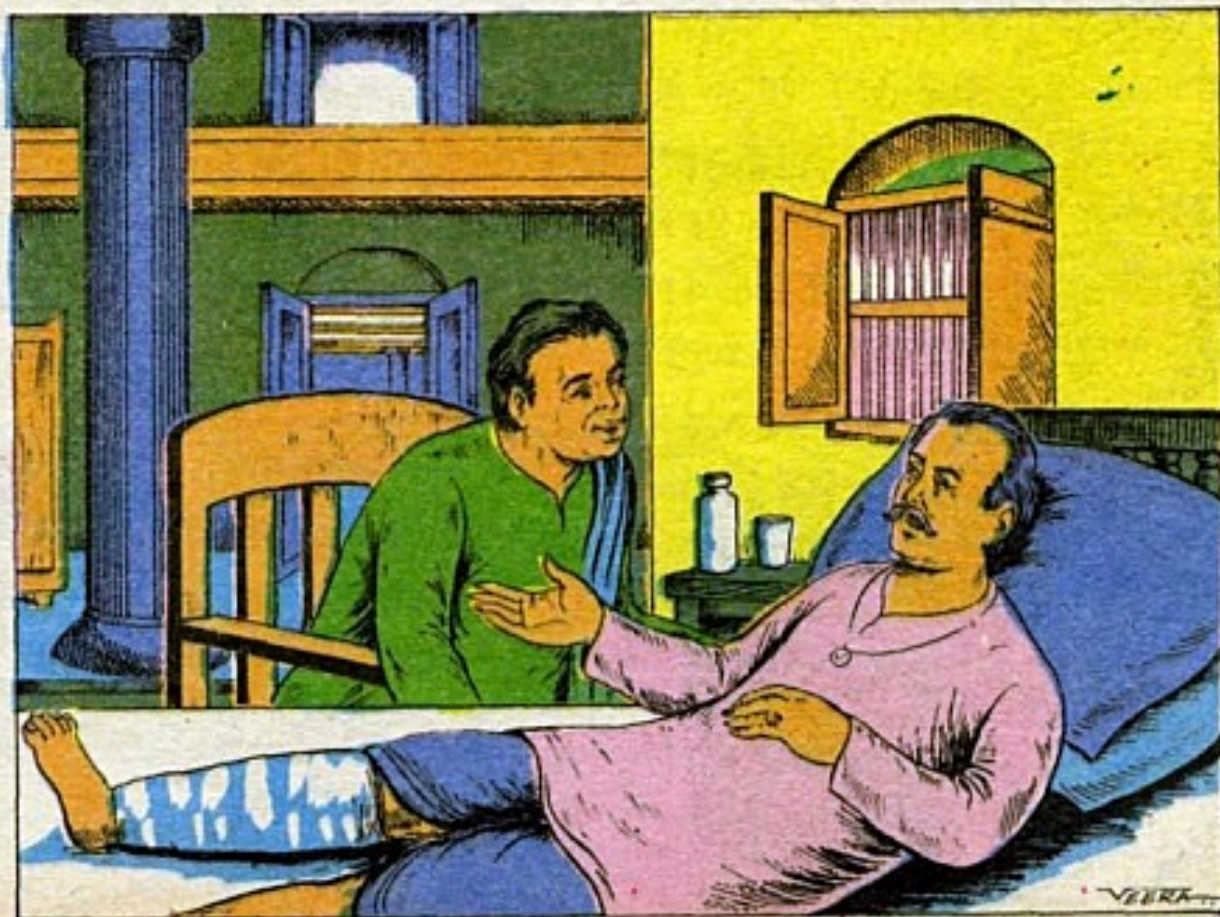
बहुरूपिया

धुन का पक्का विक्रमार्क फिर से पेड़ के पास गया। वह अपनी हार माननेवालों में से नहीं था। जब तक उसकी लक्ष्य-सिद्धि नहीं होगी, तब तक उसके प्रयत्न ज़ारी रहेंगे। चाहे कितनी ही तक़लीफ़ों को सामना उसे करना पड़े, वह डटकर करेगा। बेताल की सफलता उसकी आशाओं पर पानी फेर नहीं सकी। उसने दृढ़ चित्त होकर पेड़ से शव को उतारा और अपने कंधे पर डाल लिया।

श्मशान की तरफ़ यथावत् वह बढ़ता गया। उसने सोचा तक नहीं कि शायद हर बार की तरह इस बार भी अपने प्रयत्न में विफल हो जाऊँगा। आशाजीवी कभी निराश नहीं होते। परिणाम कुछ भी हो, वे अपने प्रयत्नों में सदा क्रियाशील रहते हैं। मुँह मोड़ लेना, पीठ पीछे दिखाना उनका स्वभाव नहीं होता। उन्हें विश्वास है कि किसी न किसी दिन उनकी विजय निश्चित है, तथ्य है। निश्चिंत होकर, निधड़क जाते हुए

बैताल कथा

विक्रमार्क को देखकर शव के अंदर के बेताल को भी संदेह हुआ कि वह मनुष्य है या कोई अलौकिक शक्ति। ना तो इसे अपनी विफलताओं की परवाह है या ना ही अपने कष्टों की। उसकी भी समझ में नहीं आया कि यह मानव आख़िर बना किस धातु का। इसलिए उसने विक्रमार्क को समझाने के उद्देश्य से कहा "राजन्, तुम एक देश के सर्व स्वतंत्र राजा हो। तुम्हारी आज्ञा को धिक्कारने का धैर्य भी किसी में नहीं। तुम अति संपन्न राजा हो। चाहो तो सुख-सामग्री तुम्हारे पैरों पर आकर गिरेगी। लेकिन आश्चर्य तो यह है कि तुमने वह सब कुछ ठुकरा दिया और लक्ष्यहीन होकर इस भयंकर श्मशान में घूम रहे हो। विलासयमी जीवन बिताने का भाग्य लाखों में से एक को मिलता है। ऐसे जीवन को ठुकराकर क्यों कष्टमय जीवन बिता रहे हो? तुम्हें देखकर दया से मन द्रवित हो जाता है। मेरा अभिप्राय है कि किसी ने, दुर्लभ तथा अलौकिक शक्ति की प्राप्ति के लिए तुम्हें उकसाया है। वह तुम्हें सुखी व शांत देखकर तुमसे ईर्ष्या करता होगा। तुम्हारे जीवन में विष घोलने के लिए ही उसने यह चाल चली होगी, इस सत्य को जाने बिना उसी का विश्वास कर रहे हो और अपने जीवन को नरक बना रहे हो।

कभी-कभी तो साधारण से साधारण मनुष्य भी दूसरों की अच्छाई का नाजायज़ फ़ायदा उठाता है। उनके सौम्य गुणों का आसरा लेकर अपने वाक्-चातुर्य से ऐसी-ऐसी मीठी बातें सुनाता है, मानों वे उसके शुभ व कल्याण के लिए ही कही जा रहीं हों। उन्हें अमल में लाने पर मानों श्रेष्ठ जीवन का मार्ग खुल जाता हो। मुझे संदेह हो रहा है कि कहीं तुम भी ऐसे मायाजाल में फँस तो नहीं गये? कहीं किसी की मीठी-मीठी बातों के वश में तो नहीं आ गये? उदाहरणस्वरूप मैं तुम्हें चित्रसेन नामक एक राजा की कहानी सुनाऊँगा।" फिर बेताल कहानी यों सुनाने लगा। चित्रसेन मगध देश का राजा था। वह विलास-प्रिय था। पूरा दिन नृत्य व संगीत में सराबोर होकर सुखमय जीवन व्यतीत करता था। इस कारण शासन की व्यवस्था अस्त-व्यस्त थी। लोगों को अनेकों कष्टों का सामना करना पड़ रहा था। महामंत्री

सुबुद्धि एक दिन राजा के पास गया और स्थिति का विवरण देता हुआ बोला "शासन-व्यवस्था अस्त-व्यस्त है। सक्रम रूप से चल नहीं रही है। जनता बहुत ही दुखी है। आपने इस ओर ध्यान नहीं दिया तो शासन-व्यवस्था छिन्न भिन्न हो जायेगी। सब अपना-अपना उल्लू सीधा करने में ही लगे रहेंगे। इसलिए मेरी सलाह है कि आप बहुरूपिया बनकर नगर में घूमें और वास्तविकता जानें।" सुबुद्धि ने सलाह दी।

राजा को मंत्री की यह सलाह सही लगी। उसी रात वेष बदलकर वह गया और उसने देखा कि राजकर्मचारी कितने घूसखोर हैं। दूसरे दिन जब उनसे पूछा गया तो उन्होंने नादान सूरत बनाकर कहा "प्रभु, लगता है, हमारे दुश्मनों ने आपके कान भरे हैं। आपको हमारे बारे में अंट-संट बताया है; बढ़ा-चढ़ाकर कह दिया है"।

"तुम लोगों की अनीति मैंने स्वयं अपनी आँखों देखी है। तुम लोगों ने मेरे बदले वेष में मुझे नहीं पहचाना।" राजा ने कहा। राजकर्मचारी उसके पैरों गिरे और क्षमा माँगी। उन्हें सावधान करते हुए राजा ने कहा कि आगे कभी ऐसा न हो। सबको विदित हो गया कि राजा बहुरूपिया बनकर आ रहे हैं और राजकर्मचारियों पर निग़रानी रख रहे हैं। इससे कुछ दिनों तक उनके अनीतिपूर्ण कार्य रुक गये।

राजकर्मचारियों के, अनीति के मार्ग से हट जाने मात्र से शासन सक्रम रूप से नहीं चलेगा। जब तक राजा स्वयं शासन-सूत्रों को अमल में ले आने में दिलचस्पी नहीं दिखाता, क्रियाशील नहीं होता, तब तक सब कुछ ढ़ीला ही ढ़ीला रहता है। अस्तव्यस्त शासन के कारण जनता का जीना दुर्भर हो जाता है, और राजा है जो महामंत्री की बातें अनुसुनी कर रहा है। इसलिये सुबुद्धि ने समीप ही के अरण्य में रहनेवाले एक राजर्षि की शरण ली और उसे राजधानी ले आया। उस राजर्षि का नाम था जनकसेन।

जनकसेन वृद्ध था। वह मगध राजाओं का वंशज था। इहलोक के सुखों से उसे विरक्ति हो गयी, इसलिए अरण्य में जाकर वह तपस्या कर रहा था। उसकी बात मगधराजाओं के लिए अचूक थी, अटल थी, शिरोधार्य थी।

चित्रसेन ने जनकसेन का स्वागत किया।

तो बाक़ी लोग भी समर्थ होंगे। जब तुम बहुरूपिया बनकर जाओगे तो याद रखना कि तुम्हारा लक्ष्य केवल जनता का कल्याण हो। राजकर्मचारियों की अनीति से जनता का कल्याण ही प्रधान जानो। एक वर्ष के बाद, जब तुम बहुरूपिये के वेष में होगे, तब मैं तुम्हें दिखायी पड़ूँगा। कभी भी, कहीं भी तुमसे मिलने का अधिकार मैं रखता हूँ''। चित्रसेन ने 'हाँ' कहा। जनकसेन चला गया।

तब से चित्रसेन हफ़्ते में एक बार ही सही, बहुरूपिया बनकर लोगों में आया-जाया करता था। धीरे-धीरे उसे मालूम होने लगा कि प्रजा की क्या-क्या दिक़्क़तें हैं। जो दिक़्क़तें उसने देखीं या जानीं, उन्हें दूर करने का उपाय भी वह सूचित करता था। उन समस्याओं के परिष्कार का मार्ग भी बताता था।

इतना सब कुछ करते हुए भी अपने ऐशो-आराम की ज़िन्दगी को वह छोड़ नहीं सका।

देखते-देखते एक साल गुज़र गया। एक दिन चित्रसेन अपने शयन-कक्ष में लेटे-लेटे नृत्य देख रहा था। राग का आलापन भी हो रहा था। वह उनका आनंद लूटते हुए इतना तन्मय हो गया कि बीच-बीच में तालियाँ बजाता और उनकी वाह-वाही कर रहा था। तब उस समय अचानक जनकसेन ने वहाँ प्रवेश किया।

उन्हें देखते ही चित्रसेन हड़बड़ाता हुआ उठ बैठा और उनका पादाभिवंदन किया। जनकसेन ने असंतृप्त दृष्टि से उसकी ओर देखा और कहा

वह उसके विनय की प्रशंसा करता हुआ बोला ''पुत्र, तुम तो सद्गुण-संपन्न दीख रहे हो। लेकिन लगता है कि तुम्हारे राज्य में प्रजा सुखी नहीं। क्या कभी तुमने इस दिशा में सोचा है?''

तपस्वी के इस प्रश्न से चित्रसेन थोड़ा घबड़ाया अवश्य, फिर भी अपने को संभालते हुए उसने कहा ''मैं बहुरूपिया बनकर राज-कर्मचारियों की अनीतियों के बारे में जानकारी प्राप्त कर रहा हूँ। इससे ज़्यादा मैं क्या करूँ, यह मुझे नहीं मालूम। मुझे अपने मंत्रियों, अधिकारियों तथा अनुचरों पर संदेह हो रहा है। आप ही उनकी परीक्षा लीजिये और अपना निर्णय सुनाइये''। जनकसेन ने उसकी इस प्रार्थना को अस्वीकार करते हुए कहा ''राजा समर्थ हो

"इस साल भी तुम्हारे देश में कहने योग्य कोई परिवर्तन नहीं हुए हैं। मैं जो बताकर गया था, क्या श्रद्धा से तुमने उसे आचरण में रखा?"

"कल ही बहुरूपिया बनकर एक ग़रीब के घर गया। चिकित्सा की सुविधा के अभाव में वह दुखी था। मैने उसकी चिकित्सा का आवश्यक प्रबंध किया।" चित्रसेन ने जवाब दिया।

"ठीक है। मैंने तो तुमसे कहा था कि जब बहुरूपिया बनकर जाओगे, तब जनता-कल्याण के अलावा किसी और बात की ओर तुम्हारा ध्यान जाना नहीं चाहिये। लगता है, तुमने ऐसा नहीं किया।" जनकसेन ने कड़े स्वर में कहा। चित्रसेन सकुचाता हुआ बोला "एक साधारण नागरिक की बुरी हालत थी, स्वास्थ्य उसका खराब हो गया था, तब मैने उसकी देख-भाल का आवश्यक प्रबंध किया। उचित चिकित्सा भी करवायी। फिर भी आप क्या समझ रहे हैं कि मैनेआपकी आज्ञा का पालन नहीं किया?"

"हाँ,हाँ, मैं जान गया कि तुमने उचित चिकित्सा करवायी। लेकिन मैं जो पूछ रहा हूँ, वह तुम्हारे वेष के बारे में" जनकसेन ने पूछा।

चित्रसेन उस प्रश्न-पर चकित हुआ और बोला "हाँ, मैं उस समय बहुरूपिये के रूप में था"। "किस वेष में थे?" जनक ने पूछा। "एक ग़रीब किसान के वेष में" चित्रसेन ने जवाब दिया।

"गरीब किसान भी मगध की प्रजा में से

एक है। अपनी प्रजा में ही से किसी एक का वेष तुमने धारण किया तो यह बहुरूपियापन कैसे कहलाया जा सकता है?" जनकसेन ने कहा।

चित्रसेन हकबकाता हुआ बोला "मैंने ग़रीब किसान का वेष धारण किया तो क्या वह दूसरा वेष-धारण नहीं हुआ? तो फिर आप ही कहिये, कौन-सा वेष पहनने पर मैं बहुरूपिया कहलाऊँगा?"

जनकसेन हँस पड़ा और बोला "तुम मगध की प्रजा में से एक हो। अपनी प्रजा में से ही एक बनकर उसका वेष धारण करोगे तो वह वेष कहला नहीं जायेगा। तुम एक ग़रीब किसान बने और एक और ग़रीब किसान को बीमार पाया। उसकी उचित चिकित्सा करवायी। वही

अगर राजा होता तो सब ग़रीबों की उचित चिकित्सा कराने की बात सोचता। उसका प्रबंध भी करता। एक-एक की समस्या पर ही सोचोगे तो तुम भी एक साधारण व्यक्ति बनकर रह जाओगे। परंतु जब पूरी जनता की समस्याओं के बारे में सोचोगे तो तब तुम राजा कहलावोगे। राजा को अपने को एक तक सीमित नहीं रखना चाहिये बल्कि समिष्टि के बारे में सोचना चाहिये। क्या अब बात समझ में आयी?''

चित्रसेन ने तक्षण अपनी त्रृटि को स्वीकार करते हुए कहा ''भविष्य में संपूर्ण जन-कल्याण को दृष्टि में रखकर ही किसी भी समस्या को सुलझाऊँगा।'' बेताल ने विक्रमार्कको यह कहानी सुनायी और कहा ''राजा को चाहिये कि वह शासन सुचारू रूप से चलाये। लेकिन चित्रसेन ऐसा ना करके विलासों में डूबा रहा। बाद उसमें जो परिवर्तन हुआ, अच्छा ही हुआ। लेकिन जनकसेन ने इस बाबत जो भी बातें की, मुझे लगता है कि उनमें वाक्-चातुर्य अधिक है। अलावा इसके, उसकी बातों में परस्पर-वैरुध्य है। कोई भी राजा, उस देश के नागरिकों में से एक है। वह कार्य-सिद्धि के लिए कोई भी वेष धारण कर सकता है। लेकिन उसके नये वेष को वेष ना मानना अर्थरहित नहीं? उसके बताये गये सूत्र के अनुसार तो राजा को राक्षस या देवता का वेष धारण करना चाहिये, क्योंकि वे दोनों राजा की प्रजा नहीं हैं। मेरे इन संदेहों के उत्तर जानते हुए भी मौन रहोगे तो तुम्हारा सिर सौ टुकड़ों में फट जाएगा''।

विक्रमार्क ने उसके संदेहों को दूर करते हुए कहा ''हमें भूलना नहीं चाहिये कि जनकसेन एक राजर्षि हैं। उनका अपना एक स्तर है और उन्होंने जो भी बातें कीं, अपने स्तर के अनुरूप ही कीं। इसे तुम वाक्चातुर्य समझते हो, यह तुम्हारी भूल है। परस्पर-वैरुध्य मानते हो तो यह तुम्हारा भ्रम है। वे चित्रसेन को इतना ही बताना चाहते थे कि देश में नागरिक विभिन्न प्रकार के होते हैं। पर उनमें जो समर्थ होता है, वही राजा बन पाता है।''

राजा का मौन-भंग होते ही बेताल शव सहित अदृश्य हो गया।

(''आधार-वसुंधरा की रचना'')

ताज़ी मिठाई

एक दिन सायंकाल रतनपुर का पटवारी रामलखन तथा गाँव के कुछ प्रमुख व्यक्ति चबूतरे पर बैठकर गपशप कर रहे थे। किसी दूसरे गाँव से आये हुए एक व्यक्ति ने वहाँ आकर रामलखन को प्रणाम किया। रामलखन ने उसे पहचान लिया। वह उसके समधि के यहाँ काम पर लगा हुआ नौकर वीर था।

उसे देखते ही रामलखन ताड़ गया कि वह कोई शुभ समाचार ले आया है। उसने उससे कहा "बोलो, क्या बात हैं ? लगता है, कोई शुभ समाचार ले आये हो"।

"हाँ मालिक, समाचार शुभ ही है। आपका पोता हुआ है। यही समाचार सुनाने मुझे यहाँ भेजा गया है" वीर ने कहा।

रामलखन की खुशी का ठिकाना ना रहा। उसने एक रुपया उसके हाथ में थमाया और कहा "तुम अभी मेरे घर जाना और वहाँ से एक टोकरी लेकर रघुमिश्रा की मिठाई की दुकान पर पहुँच जाना"।

वंशोद्धारक पोता पैदा हुआ है, इससे एक दादा को और क्या चाहिये। रामलखन इस खुशी में अपने जाने-पहचाने लोगों में मिठाई बाँटना चाहता है। वह फ़ौरन वहाँ से रघुमिश्रा की दुकान पर गया।

मिश्रा पटवारी को देखते ही बोला "आइये पटवारीजी, आप तो कभी हमारी दूकान पर आते ही नहीं"।

"पर अब ऐसी ज़रूरत आ पड़ी है। हर क़िस्म के सौ-सौ लड्डू और दस किलो जिलेबी चाहिये। एकदम ताज़ा होना चाहिये। क्या ताज़ी मिठाई है तुम्हारे पास?" पटवारी ने पूछा।

"क्यों नहीं। एकदम ताज़ी मिठाई है। वहाँ पकाया और यहाँ दिया। बस, मिनिटों की बात है।" मिश्रा ने कहा। फिर दोनों आपस में मिठाई के दाम के बारे में बातें करने लग गये। बीचों बीच इसपर भी चर्चा चली कि मिठाई

उमा चौगुले

बनती कैसे ?

पटवारी आश्चर्य प्रकट करता हुआ बोला "मिश्रा, तुमने तो जिलेबियों और लड्डुओं का ढ़ेर लगा दिया है। गोलाकार में उन्हें सजाकर रखा है। इसमें तो काफ़ी समय लगता होगा और मेहनत भी"।

"कैसे समझाऊँ पटवारीजी, इन्हें सजाने में कितना समय लगता है और कितनी मेहनत करनी पड़ती है। सच कहा जाए तो इन्हें बनाने में कम मेहनत और इन्हें सजाने में अधिक मेहनत लगानी पड़ती है।"

पटवारी ने सहानुभूति जताते हुए कहा "अकेले ही यह काम संभालना पड़ होगा"।

"क्या करूँ। मदद पहुँचाने कोई है भी तो नहीं। इन्हें बनाने में मुझे दो पूरी रातें लगीं। जिलेबियाँ बड़ी और छोटी ना हों, एक समान हों, लड्डू गोलाकार में सुँन्दर हों, इसके लिए एक और अतिरिक्त रात लगी।" मिश्रा ने अपनी मेहनत का ब्योरा दिया। उसके कहने का मतलब था कि इन्हें बनाने में जितना समय लगता है, उससे भी ज़्यादा समय इनकी सजावट में लगता है।

मिठाइयों को नज़दीक से देखते हुए पटवारी ने कहा "पहले तो मैं जान नहीं पाया, लेकिन अब जान रहा हूँ"।

"क्या आप समझते हैं कि उन दो रातों में ही मेरा काम ख़तम हो गया? नहीं, इनको सजाने में एक और रात मुझे जागना पड़ा। काफ़ी मेहनत करनी पड़ी। तभी इतनी सुँदरता से इन्हें सजा पाया हूँ। कुल तीन रातें बिना सोये लगातार काम करता रहा। अब तो आप समझ गये होंगे कि यह काम कितनी मेहनत का है।"

तब वहाँ वीर एक बड़ी टोकरी लिये पहुँचा। उसको देखते ही मिश्रा खुश हो बोला "टोकरी इधर देना, तोलकर मिठाई उसमें रखता हूँ।" कहकर उसने हाथ फैलाये। पटवारी अपनी जगह से उठकर तुरंत बोला "नहीं मिश्राजी, मुझे आपके यहाँ कुछ नहीं खरीदना है। मैं तो ताज़ी मिठाइयाँ खरीदने निकला था"।

मिश्रा अब समझ गया कि बातों-बातों में उसने पटवारी से असली बात बता दी। उसकी बातों से स्पष्ट था कि वह मिठाई तीन दिनों के पहले बनायी गयी थी।

'चन्दामामा'
परिशिष्ट - ७५

हमारे देश के वृक्ष

अमलतास

हमारे देश के सुन्दर वृक्षों में से अमलतास एक है। इस वृक्ष में पीले रंग के विकसित फूल गुच्छों में भरे हुए होते हैं। यह यूरोप की 'लेबर्नम' जाति का है, लेकिन इसके फूल उससे बड़े हैं और (३०-४० सें.मी) सुन्दर हैं। फरवरी और मार्च के बीच इस पेड़ के पत्ते झड़ जाते हैं। फिर इसके बाद इसकी टहनियों में फूल विकसित होते हैं। अप्रैल-मई के मध्य फिर से पत्ते अंकुरित होते हैं।

साधारणतया १,५०० मीटर की ऊँचाई के पहाड़ी प्रांतों में ये पेड़ अधिक पाये जाते हैं। इन पेड़ों की ऊँचाई १२-१५ मीटर तक की होती है। इसके तने नाटे होते हैं, टहनियाँ चारों तरफ़ फैली हुई होती हैं। ये झुकी हुई होती हैं और घनी भी। पत्ता पक्के रंग का होता है। १०-१२ सें.मी. की चौडाई होती है। टहनी के दोनों ओर ये जोड़ियों में होते हैं।

इसके फलों की लंबाई ६०-१०० मीटर की होती है। ये फल लंबे और काले होते हैं। एक-एक पेड़ में सौ फलों तक लटकते दिखायी देते हैं। फल के अंदर ४० से १०० तक का, कमरों की तरह विभाजन होता है। हर कमरे में चिकने अंडाकार के रूप में बीज होते हैं। कमरों की तह में मीठी गुज़्ज़ा होती है। विरोचन के कामों में आनेवाली औषधियों को तैयार करने में इसका उपयोग होता है। इस गुज़्ज़े को बंदर बड़े चाव से खाते हैं। इसीलिए इसे हिन्दी में 'बंदर-लाठी' कहते हैं।

वृक्ष-शास्त्र में अमलतास पेड़ को 'कासिया फिस्टुला' कहते हैं। हिन्दी में और बंगला में इसे 'अमलतास', मराठी में 'भावा', तमिल में और मलयालम में 'कोन्ने' कहते हैं। केरल प्रान्त में अप्रैल में पड़नेवाले 'विषुकनि' पर्वदिन के अवसर पर इस पेड़ के फूलों को पूजा के लिए उपयोग में लाया जाता है।

दिल्ली, कलकत्ता, बंबई, मद्रास जैसे महानगरों में ये पेड़ सड़क के दोनों ओर पाये जाते हैं। नगर की सुंदरता में ये चार चाँद लगाते हैं। बंबई में 'लेबर्नम रोड' के नाम से एक सड़क का होना विशिष्ट बात है।

अतिप्राचीन नाटककार

भास

रामायण और महाभारत की रचना कुछ हज़ारों वर्ष पूर्व हुई थी। कितनी ही पीढ़ियों से इनका पठन होता आ रहा है। अब भी ये ग्रंथ पाठकों का मनोरंजन करते हैं और हृदय को छूते भी हैं। रामायण और महाभारत की कथाओं के आधार पर भारतीय भाषाओं में कितने ही काव्य रचे गये हैं। अनेक नाटक भी रचे गये हैं। संस्कृत भाषा के अति प्राचीन नाटककार भास ने भी रामायण और भारत की कथाओं के आधार पर अनेकों नाटक रचे।

सुप्रसिद्ध प्राचीन नाटककार भास के जीवन की विशेषताओं का विवरण उपलब्ध नहीं है। महाकवि कालिदास ने भास का ज़िक्र बड़े ही आदर के साथ किया था। इससे यह स्पष्ट होता है कि इतिहासकारों तथा साहित्यवेत्ताओं ने भास को समुन्नत स्थान दिया। कुछ और प्राचीन ग्रंथ भी भास की तथा उनसे रचित 'स्वप्न वासवदत्ता' की पर्याप्त प्रशंसा करते हैं; उनका गुणगान करते हैं। किन्तु १९१२ तक इस नाटक को किसी ने नहीं पढ़ा।

१९१२ में गणपति शास्त्री नामक एक सुप्रसिद्ध संस्कृत पंडित ने केरल में कुछ तालपत्रों को खोज निकाला। 'स्वप्न वासवदत्ता' तथा और बारह नाटक इन तालपत्रों में मिले। रचना-शैली को देखते हुए पंडित तथा समालोचकों का अभिप्राय है कि ये सब नाटक एक ही रचयिता के रचे हुए नाटक हैं। यह तो सर्वविदित बात है कि 'स्वप्न वासवदत्ता' के रचयिता भास ही हैं। इस आधार पर माना जाता है शेष नाटकों की भी रचना उन्होंने ही की।

कहा जाता है कि भास ई.पू. के ४-५ शताब्दी के थे। उस काल में देश भर में संस्कृत भाषा को राजाओं का आदर प्राप्त था। इसलिए संस्कृत भाषा के नाटककार भास किस प्राँत के हैं, कहना कठिन है। भास के नाटकों की देश-भर में प्रसिद्धि थी। पूर्व तालपत्रों को मंदिरों में सुरक्षित रखा जाता था। उत्तर भारत के मंदिरों पर बारंबार आक्रमण होते रहते थे, इसलिए इन तालपत्रों का भी नाश हुआ होगा। पंडितों का अभिप्राय है कि इस कारण भास से रचित नाटकों की प्रतियों का भी इसी प्रकार नाश हुआ होगा।

एक पुराण गाथा के आधार पर रचे गये 'स्वप्न वासवदत्ता' की कथा संक्षेप में यों है।

वत्सदेश के युवराज उदयन ने उज्जयनी की अपूर्व सुंदरी वासवदत्ता से विवाह किया। इसके उपरांत वह विलास-क्रीडाओं में डूबा रहा। राज्य के प्रति उदासीन रहा और अपनी जिम्मेदारियों को भुला दिया। जब देखो, अपनी सुख-सामग्री जुटाने में ही समय बिताता रहा। उसकी इस नीयत के कारण शासन-व्यवस्था शिथिल हो गयी। अधिकारियों ने भी अपने कर्तव्यों को भुला दिया।जैसे राजा, वैसी प्रजा।

इस परिस्थिति का आसरा लेकर शत्रु राजा ने वत्सदेश पर हठात् आक्रमण किया और आधे राज्य को अपने हस्तगत किया।

मंत्री ने जान लिया कि रानी वासवदत्ता से राजा उदयन को अलग करने पर ही वह सही मार्ग पर चल पायेगा। इसे कार्यान्वित करने के लिए उसने एक योजना बनायी। एक बार जब वासवदत्ता किसी काम पर बाहर गयी तो मंत्री ने अफ़वाह फैलायी कि वह आग में जल गयी है। इस समाचार से राजा के हृदय को धक्का लगा। उसे अपार दुख हुआ। क्रमश: वह वासवदत्ता को भूलने लगा। तब उसने शासकीय कार्यों की ओर ध्यान देना आरंभ किया। शासन-व्यवस्था में सुधार होने लगे। शत्रु राजा से अपने आधे राज्य को छीन लिया। अब पूरा देश और उसकी संपूर्ण शासन-व्यवस्था उसके काबू में आ गयी।

एक दिन जब उदयन सो रहा था, तब वासवदत्ता उसे सपने में दिखायी पड़ी। चौंककर जैसे ही उसने आँखें खोलीं, देखा कि वासवदत्ता सामने खड़ी है। एक क्षण भर के लिए उसे यह सपना लगा। जब उसे ज्ञात हुआ कि यह सपना नहीं, सच है, तो उसे अपार हर्ष हुआ। सुषुप्तावस्था से चेतनावस्था में उसे लाने के लिए विवेकी मंत्री की गयी योजना के संबंध में पूरी जानकारी पाकर वह बहुत ही आनंदित हुआ। उदयन और वासवदत्ता पुन: एक हो गये।
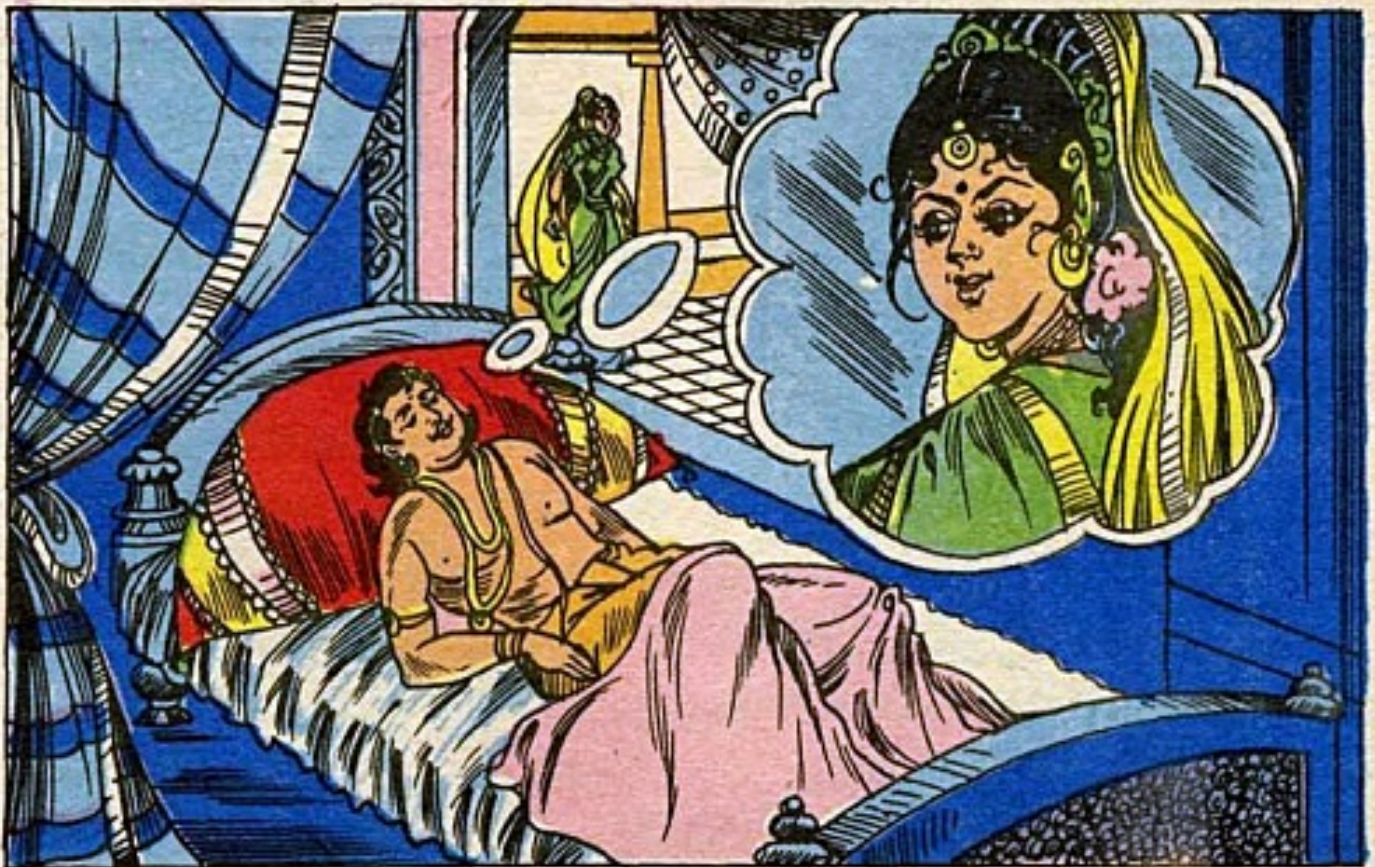
क्या तुम जानते हो?

१. एवरेस्ट शिखर का अधिरोहण किसने किया और कब ?
२. ई.स. की पहली शताब्दी में हमारे देश में आये एक व्यक्ति ने बहुत-से लोगों को ईसाई धर्म में परिवर्तित किया और यहीं मर गये। वे कौन हैं ?
३. हमारे देश के सुप्रीम कोर्ट की प्रथम महिला जज कौन हैं ?
४. बाघ राष्ट्रीय मृग के रूप में कब घोषित हुआ ?
५. टाइपरेटर किसका आविष्कार है और कब ?
६. सप्त समुद्रों के क्या नाम हैं ?
७. चंदीगढ़ के 'राक गार्डेन' के निर्माता कौन हैं ?
८. १८०४ में नेपोलियन फ्रान्स का सम्राट बना। उसी साल ''यातायात जगत में महत्वपूर्ण घटना घटी। वह कौन-सी है ?
९. औरंगजेब ने अपनी बेटी को बीस साल तक कैद में रखा, क्योंकि उसे संदेह था कि वह अन्य संप्रदायों के विचारों से प्रभावित है। उसका नाम क्या है ?
१०. रूसी भाषा-भाषी किस लिपि का उपयोग करते हैं ?

संयुक्त राष्ट्र संघ के प्रथम प्रधान सचिव थे (दिसंबर' ९४ चन्दामामा) नार्वे के ट्रिग्वी ली, (१९४६ से) इनके बाद स्वीडन के डयाग ह्यामर्सक बोल्ड (१९५३) इनके बाद बर्मा के यू थांट (१९६१) इनके बाद आस्ट्रिया के कर्ट वाल्डहीम (१९७२) इनके बाद पेरु के जेवियर पेरेज डी क्यूलर (१९८२) १९९२ से ईजप्ट के बूट्रोस घाली

उत्तर

१. भाटत का तेनसिंह नार्गे, न्यूज़लान्ड का सर एडमंड हिल्लरी, १९५३ में
२. ईसा के बारह शिष्यों में से एक सेयिंट थामस
३. केरल की जस्टिस फातिमा बीवी
४. १९७२ में
५. अमेरीका के षोल्स, गिड्डन, सोले, १८६७ में
६. पसिफिक महासमुद्र, अटलांटिक महासमुद्र, आर्किटिक महासमुद्र, दक्षिण महासमुद्र, हिन्दु महासमुद्र, अरेबिया समुद्र, बंगलाखाड़ी
७. नेकचंद
८. आर. ट्रिवितिक ने भाप से चलनेवाले रेल इंजन को चलाया
९. जेबूनीसा
१०. क्रैलिक

अर्थहीन स्वार्थ

विदर्भ में रामशर्मा नामक एक बड़ा अर्थ-शास्त्रवेत्ता था। राजा और प्रजा विभिन्न विषयों में उसकी सलाहें लेते थे। उसकी सलाहों के मुताबिक राजा ने अपनी शासन - व्यवस्था को इतना सुव्यवस्थित किया कि कभी भी देश में आर्थिक संक्षोभ नहीं आया। देश सदा सुसंपन्न रहा। प्रजा सुखी थी। हर नागरिक ने अपने वैयक्तिक जीवन में भी उसके अर्थ-सूत्रों को अमल में रखा, जिस कारण से उन्होंने अपना संतुलन कभी नहीं खोया। इससे देश का दारिद्य मिट गया और प्रजा ने किसी भी आवश्यकता की कमी महसूस नहीं की।

इंद्रपुरी विदर्भ का पड़ोसी राज्य था। उस राज्य में कितने ही सुधार लाये गये, लेकिन दरिद्रता जैसी की वैसी ही रही। पड़ोसी राज्य में अमल में लाये गये आर्थिक सुधारों का इंद्रपुरी के राजा ने खूब अध्ययन किया, ग़ौर से उन्हें परखा। उनको सही और उपयोगी मानकर अपने देश में भी अमल में ले आया। किन्तु प्रयोजन शून्य था।

यह बात रामशर्मा को मालूम हुई। वह यह जानने को बहुत ही उत्सुक था कि जो आर्थिक सुधार अपने देश में इतने सफल हो रहे हैं, उन्हीं को अमल में लाने पर भी दूसरे देश में क्यों असफल हो रहे हैं। इसका क्या मूल कारण है, यह जानने वह इंद्रपुरी गया। उसके निकट बंधु उस देश में थे, इसलिए किसी को बताने की ज़रूरत भी नहीं पड़ी कि वह वहाँ क्यों जा रहा है।

इन दोनों देशों के बीच एक जंगल था। रामशर्मा जंगल से गुज़रते हुए थक गया था, इसलिए अपनी थकावट को दूर करने के लिए एक पेड़ की शीतल साया में बैठा। हठात् एक भूत ऊपर से कूद पड़ा।

रामशर्मा ने तब तक भूत नहीं देखा। वैसे तो वह धैर्यशाली था, पर उसमें थोड़ा डर पैदा हो

'विद्युल्लता'

गया । वह काँपने लगा । उसकी यह हालत देखकर भूत ने कहा ''महाशय, मुझे देखकर आप डरिये मत । मैं इंद्रपुरी का बहुत बड़ा भाग्यवान नागरिक हूँ । एक गाँव में रहता हूँ, इसलिए मेरी आमदनी और संपत्ति के बारे में किसी को कुछ नहीं मालूम । मैने जो भी कमाया, एक जगह पर छिपाकर रखा है । यह बात मेरे अपने भी नहीं जानते । उन्हें खाने-पीने की कोई कमी नहीं, इसलिए किसी ने मेरे बारे में जानने की कोई कोशिश भी नहीं की । मुझपर उन्होने अपना ध्यान केंद्रित नहीं किया । मैंने वह धन चुराके रखा, जो किसी के उपयोग में नहीं आया, इसीलिए मैं भूत बन गया हूँ । अगर उस धन का सदुपयोग हो, किसी अच्छे काम के लिए वह उपयोग में लाया जाए तो इस रूप से मुझे मुक्ति मिलेगी । मैं भूत बनकर नहीं रहूँगा और मुझे मोक्ष मिलेगा, उत्तम लोकों में जा पाऊँगा । मुझे मालूम है कि आप प्रमुख अर्थ-शास्त्रवेत्ता रामशर्मा हैं । मेरी सहायता कीजिये, जिससे मुझे पुण्य मिले और इस रूप से छुटकारा पाऊँ''। उसने हाथ जोड़कर प्रार्थना की ।

''इस छोटी-सी बात पर इतना परेशान क्यों हो रहे हो? इस धन को राजा तक पहुँचाने का आवश्यक प्रबंध मैं करूँगा । वे उपयोगी और जनकल्याण-कार्यों में इसे लगाएँगे'' रामशर्मा ने कहा ।

''हमारे राजा को जन-कल्याण से अधिक विलास पसंद है । मेरा धन तो वे अपने विलासों के लिए खपायेंगे । इससे उनके विलास-विनोद और बढ़ेंगे । इस प्रकार मेरे धन का दुरुपयोग होगा तो मुझे अपने इस रूप से छुटकारा नहीं मिलेगा''। भूत ने कहा ।

''तुम्हारे राजा ने कितनी ही ऐसी संस्थाएँ स्थापित की हैं, जिनसे जनता का हित हो । तुम्हारा धन मैं उनके सुपुर्द करूँगा । राजा को यह बात मालूम होगी तो वे भी संतुष्ट होंगे । इससे प्रजा को भी लाभ पहुँचेगा ना ।'' रामशर्मा ने भूत को सलाह दी ।

''तब तो आप हमारे देश की सेवा-संस्थाओं से अपरिचित-से लगते हैं । वे संस्थाएँ तो अनीति से भरी हुई हैं । दस लाख अशर्फियाँ उन्हें दी जाएँ तो लाख अशर्फियाँ भी जनता को

नहीं मिलेंगी''। भूत ने कहा।

मर जाने के बाद भी किसी भूत का यह आशय कि अपना धन किसी कल्याणमयी कार्य में लगाया जाए, सचमुच ही प्रशंसनीय है। और रामशर्मा को भूत का यह आशय बहुत ही अच्छा लगा। ऐसे परोपकारी नागरिकों के होते हुए भी भला इंद्रपुरी, दरिद्रता का अनुभव क्यों कर रहा है, रामशर्मा की समझ में नहीं आया। यों सोचते हुए रामशर्मा किसी निश्चय पर आया और भूत से बोला ''मुझे तुम्हारे राजा पर पूरा विश्वास है। देश की सेवा-संस्थाओं में भी विश्वास रखता हूँ। देखा जाए तो लगता है कि तुम्हारे देश की परिस्थितियाँ ही कुछ भिन्न हैं। तुम अपने देश के पंडितों की सहायता ले सकते थे।''

''हमारे देश के पंडितों में धन की प्यास बहुत है। किसी से पूछो तो वे यही कहेंगे कि वह धन हमें दो। उनपर मेरा कोई विश्वास नहीं, इसीलिए आप जैसे निस्वार्थी की सहायता के लिए आया हूँ।'' भूत ने कहा।

रामशर्मा ने भूत की सहायता करने का वादा किया। अदृश्यरूप में भूत भी उसके साथ-साथ चला। यों वे दोनों इंद्रपुरी पहुँचे। भूत की सलाह पर शर्मा एक सराय में ठहरा।

इस सराय को बनवाया, नगर के प्रमुख व्यापारी धनसेन ने। कहा जाता है कि दान-धर्मों में और पुण्य-कार्यों में उसके बाद ही किसी का नाम लिया जाना चाहिये।

रामशर्मा ने भूत को धनसेन के बारे में कहा ''इसके दादा-परदादा त्रिपुर देशस्थ थे। सच्चाई और ईमानदारी में ये विश्वास रखते थे। उन्ही पुरखों के सिद्धांतों पर व्यापार करना इनका पारिवारिक संप्रदाय था। इस कारण जिस किसी भी देश में इन्होने व्यापार किया, सफल हुए। धनसेन का भाई गुणसेन कितनी ही बार हमारे देश में पुरस्कृत हुआ था। राजा और जनता ने उसका स्वागत-सत्कार किया था। उसने हमारे देश में दो मंदिर बनवाये, सात धर्मसरायें बनवायीं और चार उचित वैद्यशालाएँ। अलावा इनके, कितनी ही पाठशालाएँ भी बनवायीं। उनका अब भी वही पोषण कर रहा है। उसी की देख-रेख में सब सुचारू रूप से चल रहे हैं। धनसेन की सच्चाई तथा ईमानदारी की मैं गारंटी

देता हूँ। अपना धन उसे दो।''

''आपकी कही बातें न्याय-सम्मत लगती हैं। लेकिन इस असीम धन को किसी स्वदेशी को ना देकर विदेशी को देना उचित नहीं समझता। स्वदेशी को देने पर ही मेरी आत्मा तृप्त होगी।'' भूत ने कहा।

इतने में एक दरिद्र ब्राह्मण रामशर्मा के पास आया और कहा ''महोदय, आप परदेशी लगते हैं। इसीलिए आपसे पूछने का साहस कर रहा हूँ। लगता है, मेरा पुराना घर गिर जायेगा। मेरी माँ बीमार है। मेरी सारी आवश्यकताओं की पूर्ति आप कर नहीं पायेंगे। आप जो देना चाहें, देकर मेरी सहायता कीजिये। इस नगर में मैं चालीस सालों से रह रहा हूँ। किसी एक ने भी एक भी दमड़ी देकर मेरी मदद नहीं की। मेरे देश के लोग स्वार्थी हैं, अपना भला ही सोचते हैं''।

रामशर्मा ने उस ब्राह्मण को एक अशर्फ़ी दी और कहा ''तुम्हारी ज़रूरतों को जिन-जिन्होंने पूरा नहीं किया, उन सबको स्वार्थी कहना उचित नहीं लगता। परदेशियों के सम्मुख अपने देशवासियों की निंदा करना अपनी ही निंदा करनी होती है। यह चेष्टा अपवित्र तथा असंगत है। तुम्हारी तक़लीफ़ें जल्दी ही ख़तम हो जायेंगी। धीरज रखो''। शर्मा ने उसे यों हितबोध करके भेज दिया।

बाद उसने भूत से कहा कि अपना धन इस दरिद्र ब्राह्मण को दो। इसपर भूत ने कहा ''यह सच है कि ब्राह्मण ज़रूरतमंद है। लेकिन यहाँ तक आकर यह धन इस नगर के आदमी को क्यों दूँ? अपने ही गाँव के आदमी को दूँ तो मुझे तसल्ली होगी''।

सराय में थोड़ी देर आराम करने के बाद रामशर्मा, भूत के साथ नगर की ओर बढ़ा। रास्ते में एक राजभट सामने आया। रामशर्मा ने उससे बात की तो मालूम हुआ कि वह भी आवश्यकताओं से घिरा हुआ है। यह भी मालूम हुआ कि वह भूत के प्रदेश का ही है।

''हमारे गाँव का तो मिल गया। हो सकता है, हमारी गली का कोई मिल जाए'' भूत ने आशा व्यक्त की।

अब रामशर्मा को भूत का उद्देश्य पूरी तरह से समझ में आ गया। उसने तुरंत भूत से कहा

''तुम्हारी गली के आदमी को भी ना देकर तुम्हारे ही घर के किसी सदस्य को दिया जाए तो और अच्छा होगा। चलो, तुम्हारा गाँव ही चलते हैं''। दोनों भूत के गाँव पहुँचे। दोनों मरे हुए उस भाग्यवान के घर गये, जो अब भूत बन गया था। अंदर बहुत ही कोलाहल मचा हुआ था।

यह देखकर भूत ने कहा ''हाँ, हाँ, अब याद आ गया। आज मेरा जन्म दिन है। जब मैं जीवित था, तब इसी दिन हमारे घर में उत्सव जोर-शोर से मनाया जाता था। मेरी पत्नी और मेरी संतान मुझे पुष्प-मालाएँ पहनाकर मेरी पूजा करती थीं। मेरे लिए वे गायकों को बुलवाते, सुंदर व मधुर गीत गवाते।'' वह बड़े ही उत्साह से कहा जा रहा था, तब रामशर्मा ने घर के अंदर प्रवेश किया। वहाँ उपस्थित लोगों से उसने कहा ''मरे हुए अपने यजमान के जन्म-दिन को आप अब भी इतने उल्लास के साथ, इतने बड़े पैमाने पर मना रहे हैं। सचमुच आप लोग धन्य है''।

एक विधवा, दो पुत्र, बहुएँ सब उसकी बातें सुनकर आश्चर्य से उसे देखने लगे। दो क्षणों के बाद उस विधवा ने कहा ''हम तो उनको भूल ही गये। जब तक वे जीवित रहे, अनुसासन के नाम पर हमे उन्होंने चुप रखा। हमारे जीवन में कोई मौज़ या विनोद ही ना रहा। उनकी मौत ने हमें सुख दिया। हम अब स्वतंत्रता का मज़ा चख रहे हैं। हमारी अपनी बीस एकड़ की खेती है। दूसरों से खेती कराके, उससे जो धन मिलता है, उससे सप्ताह में एक बार ही सही मज़ा लूटते

आप तो जानते ही हैं कि मरे हुए आदमी की याद करने से कोई फ़ायदा नहीं होता।'' विधवा ने बड़ी विरक्तता से ये बातें कहीं।

भूत एक पल के लिए भी वहाँ ठहरना नहीं चाहता था। रामशर्मा के कानों में वह बड़बड़ाने लगा तो मज़बूरन उसे वहाँ से निकलना पड़ा।

''अब मैं समझ पा रहा हूँ कि दूसरी शादी करके मैने अपने बड़े लड़के के साथ कितना अन्याय किया है। तुरंत आप उससे मिलिये और बात कीजिये। उसे मेरे दुर्भाग्य की कहानी सुनाइये''। भूत ने शर्मा से कहा।

रामशर्मा ने गाँव के लोगों से भूत के बड़े लड़के के बारे में पूछा तो एक ने कहा ''वह तो एकदम निकम्मा है। सौतेली माँ ने जब उसे घर से निकाल दिया, उसकी सहायता करने से साफ़-साफ़ इनकार कर दिया तो हम कुछ लोगों ने उसे सहायता देने का आश्वासन दिया। हमने उससे कहा भी कि वह सुधर जाए तो लड़-झगड़कर ही सही, जायदाद में भी हिस्सा दिलवायेंगे। वह बहाना बनाता रहा कि पिता की मृत्यु के बाद मेरी मानसिक शांति खो गयी। इस बहाने का आसरा लेकर वह खूब शराब पीता रहा। अब भी पीता ही रहता है। ताड़ के पेड़ों की झुरमुट में अचेत पड़ा आपको अब भी दिखायी पड़ेगा।''

रामशर्मा उससे मिला और उसे होश में ले आया। उसकी इस दुस्थिति का कारण पूछा तो वह अपने माँ-बाप, भाई और गाँव के सब लोगों

है, सानंद रहते हैं।''

''तो क्या आप लोगों को उनकी कभी याद नहीं आती? शर्मा ने पूछा। ''याद क्यों नहीं आती? हाँ, हममें कभी-कभी विचार आता है कि और पहले ही वे मर जाते तो कुछ और दिन हम आनंद से रह पाते। ऐसा विचार भी उनकी याद करनी ही तो है। मेरी सौत का एक बेटा है। वह पियक्कड है। पीकर किसी ना किसी को पीटता है। लोग हमसे आकर फ़रियाद करते हैं। हम उनसे बारंबार कहते रहते हैं कि उनकी मौत के बाद उसका और हमारा कोई रिश्ता नहीं। पर वे थोड़े ही सुनते हैं। हमें तो उनकी शिकायतें सुननी ही पड़ती हैं। ऐसे समयों पर भी उनको कोसते हुए उनका स्मरण करते हैं।

को, आख़िर भगवान को भी गालियाँ देने लगा।

रामशर्मा ने उसे टोका और कहा ''तुम्हारे पिता ने बहुत-सा धन कमाया है और एक सुरक्षित स्थल में गाड़ रखा है। उस धन को पाने पर तुम क्या करोगे?''

नशे में मस्त वह आँख खोलते और बंद करते हुए बोला ''मेरे पिता की तस्वीर को फूल मालाओं से सजाऊँगा और हर दिन उनकी पूजा करूँगा''। जैसे ही वह बोल चुका, भूत ने कहा ''महाशय, यही मेरा वारिस है। मेरा धन इसे मिल जाए तो मुझे तृप्ति होगी, मेरी आत्मा संतुष्ट होगी। मुझे आपकी अनुमति चाहिये। आपने अनुमति नहीं दी तो मैं असंतृप्त ही रहूँगा''।

रामशर्मा ने अनुमति दी और भूत की कही बात उसके बड़े बेटे को सुनायी। दूसरे ही क्षण भूत गायब हो गया। रामशर्मा अपना देश लौटा।

रामशर्मा की पत्नी ने अपने पति से जब यह सब कुछ सुना तो उसने पूछा ''एक अयोग्य को भूत का धन दिलाकर आपने कैसे समझ लिया कि उसे मोक्ष मिलेगा, उत्तम लोक जायेगा। मेरी तो समझ में नहीं आ रहा है। मुझे तो सब कुछ गड़बड़ लग रहा है''।

रामशर्मा हँसता हुआ बोला ''इंद्रपुरी का राजा विलासी पुरुष है। वहाँ के सरकारी विभागों में अनीति भरपूर है। राजा को सरकारी विभागों या संस्थाओं पर रत्ती भर भी विश्वास नहीं है। वहाँ के लोग संकीर्ण विचारों के हैं। अपना गाँव, अपनी गली की ही वे रट लगाते हैं और इसी संकुचित दायरे में कुढ़ रहे हैं। ज़िन्दा रहते हुए और मरकर भी इसी बात को वहाँ के लोग दोहराते हैं। धन ज़रूरतमंदों के उपयोग में नहीं आ रहा है। अयोग्य उसका दुरुपयोग कर रहे हैं। कहा जाता है कि इच्छाओं की पूर्ति के ना होने से आदमी भूत बन जाता है। अर्थहीन स्वार्थ के कारण उस भूत ने अपना धन अयोग्य बेटे को दिया और संतृप्त हुआ।

यह घटना पति-पत्नी तक ही सीमित नहीं रही। बात इंद्रपुरी तक पहुँची। इंद्रपुरी के राजा और प्रजा ने भी अपनी दुस्थिति का मूल कारण जाना और बहुत लज्जित हुए। क्रमशः उस राज्य में परिवर्तन होते गये और विदर्भ की जनता की तरह वे भी सुखी रहने लगे।

'चन्दामामा' की ख़बरें

स्किप्पिंग में रिकार्ड

डी.जी. रामप्रसाद मद्रास के निवासी हैं। वे हौस सर्जन हैं। गत नवंबर १२ को पाँच घंटों में ४०, १८१ बार उन्होंने स्किप्पिंग किया और गिन्नीस पुस्तक में स्थान पाने का प्रयत्न किया। ऐसा करनेवाले घंटे में एक बार केवल पाँच मिनिटों का विश्राम ले सकते हैं। किन्तु रामप्रसाद ने सिर्फ २० क्षण विश्राम लिया। दो सालों के पहले उन्होंने एक घंटे में ३,५९० बार उठक-बैठक लगायी और अपने इस प्रयत्न का समाचार गिन्नीस पुस्तकवालों को भी दिया। लेकिन इसके पहले ही पुस्तक प्रकाशित हो चुका था, इसलिए इस बार उन्होंने सावधानी बरती और प्रकाशकों को यथासमय सूचित किया। 'लिंका' वाले पहले ही यह समाचार प्रकाशित कर चुके कि डा. रामप्रसाद ने एक घंटे में ८,५५६ स्किप किया। विशेष रूप से कहने की बात तो यह है कि डा. रामप्रसाद शिशु - चिकित्सा में विशेष अभिरुचि दिखाते हैं।

रिकार्ड के लिए प्रयत्न

कोयम्बत्तूर के एम. पार्थसारथी कवायद के शिक्षक हैं और बहुत ही जल्दी एक और नया रिकार्ड स्थापित करनेवाले हैं। वे घंटे में केवल पाँच मिनिट ही का आराम लेकर नौ घंटों में ८,५०० बार उलट-पलट सकते हैं। इसके लिए इन्हें १६ किलोमीटर की सड़क चाहिये। सड़क पर कोई रुकावट ना हो, इसके लिए इन्हें अधिकारियों की सहायता चाहिये। ये बहुत ही बढ़िया खिलाड़ी भी हैं और इन्होंने कराटे में ब्लाक बेल्ट भी पाया है। इस उलटने-पलटने की कसरत का एक वर्ष से ये लगन से अभ्यास कर रहे हैं। अमेरीका के याशिरा फरमन साढ़े दस घंटों में ८, ३४१ बार उलट-पलट कर रिकार्ड स्थापित कर चुके हैं।

ग्यारह साल पैदल

स्काटलैण्ड के फियोने कांप्रबेल की वर्तमान उम्र सत्ताईस साल है। ब्रिटेन के जान ओ ग्रोटस नामक स्वग्राम से अपने सोलहवें साल में निकल चुकी हैं। १,३६३ कि.मी. पैदल ही चलकर दूसरे छोर तक पहुँचने का उनका आशय है। वहाँ पहुँचने का उनका आशय पूर्ण हुआ, पर वे बिना रुके पैदल ही गत अक्तूबर १४को अपना स्वग्राम लौट आयीं। ग्यारह साल ये पैदल चलती रहीं और ३१,३३८ कि.मी. इन्होंने तय किये। वे आस्ट्रेलिया के सिडनी से पेर्थ तक, अमेरीका के न्यूयार्क से लास एन्जिल्स तक पैदल ही गयीं। अफ्रीका खंड के एक छोर से दूसरे छोर तक पहुँचने के लिए उन्हें दो साल लगे। उनका कहना है कि आगे कभी ऐसी यात्रा पर जाऊँगी तो अकेली नहीं जाऊँगी, किसी को साथ लेकर ही जाऊँगी।

हस्तिनापुर के समीप ही के जंगलों में हिरण्यधन्व नामक एक भील राजा था। उसके पुत्र एकलव्य को मालूम हुआ कि देश के कितने ही राजकुमार द्रोण के यहाँ धनुर्विद्या सीख रहे हैं। वे द्रोण के शिष्य बनकर समस्त अस्त्र-शस्त्रों का प्रशिक्षण पा रहे हैं।

एकलव्य धनुर्विद्या में प्रवीण बनना चाहता था। गुरु के बिना यह कार्य संभव नहीं था। उसको लगा कि द्रोणाचार्य का शिष्यत्व पाने पर ही मैं धनुर्विद्या में पारंगत हो पाऊँगा। वह जंगल में पला था, इसलिए बेचारा सांसारिक विषयों से अनभिज्ञ था। ऊँच-नीच क्या होती है, जाति-भेद क्या होते हैं, इसका उसे कुछ भी पता नहीं था। उसका लक्ष्य-तो केवल धनुर्विद्या प्राप्त करनी थी। इसी आशा को लेकर वह द्रोण के पास आया और उससे प्रार्थना की कि मुझे भी आप अपना शिष्य बनावें और धनुर्विद्या की शिक्षा प्रदान करें। द्रोण को जब मालूम हुआ कि वह भील जाति का है तो उसने उसे धनुर्विद्या सिखाने से साफ़ इनकार कर दिया।

एकलव्य ने विनयपूर्वक द्रोण को प्रणाम किया और जंगल लौटा। द्रोण के तिरस्कार ने उसे हताश नहीं किया। उसने द्रोण की एक मूर्ति बनायी, उन्हीं को अपना गुरु माना और बाण-विद्या सीखने में जुट गया। उसका अभ्यास लगातार चलता रहा। इस निरंतर अभ्यास तथा एकाग्रता के कारण वह द्रोण के सारे शिष्यों से बढ़कर बाण चलाने में पटु हो गया।

बाण चलाने में इतना पटु होने के बाद भी गर्व थोड़ा भी उसे छू नहीं पाया। वह तो यही समझने और कहने लगा कि यह सब गुरु द्रोणाचार्य की कृपा है। वे समक्ष ना हों तो क्या हुआ, उनकी मूर्ति मेरे सामने जो है। वही मुझे प्रेरणा और प्रोत्साहन दे रही है। उनका ऋण चुकाने का अवसर मिल जाए तो यही मेरे लिए अहोभाग्य है।

एक बार द्रोण के शिष्य शिकार करने उसी जंगल में आये, जहाँ एकलव्य रहता था। एक शिकारी कुत्ता अन्य शिकारी कुत्तों से अलग होकर उस जगह पर आया, जहाँ एकलव्य धनुर्विद्या सीखने में मग्न था। हिरन की छाल से ढ़के, धूलि से भरे, जटाओं से घिरे एकलव्य को उस शिकारी कुत्ते ने देखा और भोंकने लगा। अपने ध्यान में विघ्न ड़ालनेवाले उस कुत्ते के मुख पर एकलव्य ने बाणों की वर्षा की और उसका मुख बाणों से भर दिया। चुभे हुए बाणों से पीड़ित वह कुत्ता ज़ोर-ज़ोर से भोंकता हुआ राजकुमारों के पास वापस आया।

कुत्ते के मुख पर चुभे बाणों को देखकर राजकुमार समझ गये कि यह काम धनुर्विद्या में धुरंधर किसी व्यक्ति से ही संभव है। वे उसे ढूँढ़ते हुए जंगल में निकल पड़े। आख़िर उन्हें एकलव्य दिखायी पड़ा। उन्होंने उसे नहीं पहचाना। उससे पूछा कि तुम कौन हो, तुम्हारे पिता कौन हैं, किस गुरु से तुमने यह शिक्षा पायी है ?

एकलव्य ने उनसे कहा "मैं भील राजा का बेटा हूँ। मेरा नाम एकलव्य है। मैं द्रोणाचार्य को अपना गुरु मानता हूँ। उन्हीं से प्रेरणा पाकर यह विद्याभ्यास कर रहा हूँ"।

राजकुमार हस्तिनापुर लौटे और उन्होंने यह समाचार द्रोणाचार्य को सुनाया। अर्जुन इस बात पर अपने आप दुखी होने लगा कि एकलव्य धनुर्विद्या में मुझसे भी बड़ा होगा। वह ईर्ष्या से जल उठा। उसने गुरु द्रोणाचार्य से कहा "आपने तो मुझसे वादा किया था कि धनुर्विद्या में मुझसे कोई बड़ा नहीं होगा, मेरी बराबरी का कोई नहीं होगा। ऐसी शिक्षा देने का आप वचन भी दे चुके हैं। लेकिन एकलव्य की बाण-विद्या को देखते हुए लगता है कि आपने उसे मुझसे भी अधिक प्रशिक्षण दिया है"।

अर्जुन की बात सुनकर द्रोणाचार्य सन्नाटे में आ गया। सत्य जानने वह केवल अर्जुन को लेकर एकलव्य के पास गया। उसने यह बात बाकी राजकुमारों से छिपायी। उसने सोचा कि बाक़ी राजकुमारों के साथ आने से मामला बिगड़ सकता है, बात हद पार कर सकती है।

धनुर्विद्या में मग्न एकलव्य ने आगे बढ़कर द्रोणाचार्य का स्वागत किया। विनयपूर्वक उनका पाद-स्पर्श किया। उन्हें आसन पर बिठाया और कहा "मैं आपका शिष्य एकलव्य हूँ"।

"तुम मेरे ही शिष्य हो तो बताओ, गुरु दक्षिणा क्या दोगे ?" द्रोण ने एकलव्य से पूछा।

'ऐसा कुछ नहीं होता, जो गुरु दक्षिणा में दिया ना जा सके। मेरे पूरे शरीर पर आपका अधिकार है।" एकलव्य ने कहा।

"अगर ऐसी बात हो तो अपना दायें हाथ का अंगूठा गुरु-दक्षिणा में मुझे दो।" द्रोण ने माँग की। एकलव्य ने बिना कुछ सोचे-विचार अपने दायें हाथ का अंगूठा काटा और द्रोणाचार्य को समर्पित किया।

इस घटना के बाद उसने बाण चलाने की पटुता खो दी। फिर भी उसने गुरु द्रोणाचार्य की कभी निंदा नहीं की। उसने यह कभी भी सोचा तक नहीं कि ऐसे उत्तम ब्राह्मण में इतनी भारी पक्षपात-बुद्धि हो सकती है।

द्रोणाचार्य ने यों अर्जुन का भय दूर कर दिया और बिना किसी पछतावे के दोनों वहाँ से चले गये। निस्वार्थी तथा त्यागी एकलव्य को धन्यवाद तक नहीं दिया उन दोनों ने। उल्टे वे आनंद लूटते हुए हस्तिनापुर लौटे।

द्रोण से पाँडवों ने बहुत-सी विद्याएँ सीखीं। साथ ही भिन्न प्रकार की और विद्याओं में भी वे पारंगत हुए। धर्मराज सारथी के कार्य में प्रवीण हुआ तो भीम गदा-युद्ध में। धनुर्विद्या में तो अर्जुन असमान वीर बना। इस विद्या में उसका बुद्धिबल, बाण चलाने में उसकी तेज़ी व फुर्तीलापन, शस्त्रों के प्रयोग की विधि में उसका अद्वितीय कौशल सराहनीय था। निश्चय ही कहा जा सकता है कि उसकी टक्कर का कोई है ही नहीं। किन्तु अश्वत्थामा को युद्ध-संबंधी जितने रहस्य मालूम थे, किसी और को नहीं मालूम थे। नकुल और सहदेव खड्ग-युद्ध में

प्रवीण हुए। भीम का गदा - युद्ध-कौशल तथा अर्जुन की धनुर्विद्या का कमाल देखकर दुर्योधन तथा उसके भाई मन ही मन कुढ़ते थे।

एक बार द्रोणाचार्य अपने शिष्यों की परीक्षा लेना चाहता था। वह जानना चाहता था कि इनमें से निशाना बाँधने में कौन पटु है। उसने चील की एक गुडिया बनवायी और एक पेड़ पर रखवायी। बाहर से वह दिखायी नहीं पड़ती। वह अपने शिष्यों को उस पेड़ के पास ले गया और उनसे कहा "पेड़ पर जो पक्षी है, पत्तों के बीच में से सावधानी से देखने पर दिखाई पड़ेगा। आप सब उसे निशाना बनाइये और जैसे ही मैं कहूँगा, अपने बाण से उसका सिर उड़ा दीजिये।

धर्मराज को पहले यह काम सौंपा गया। द्रोण ने उससे पूछा "ग़ौर से देखो, क्या पक्षी दिखायी दे रहा है?" धर्मराज ने 'हाँ' कहा।

द्रोण ने फिर पूछा "क्या उस पक्षी के साथ-साथ मैं और यहाँ उपस्थित सब दिखायी दे रहे हैं?" धर्मराज ने कहा "सब दिखायी दे रहे हैं"। "तुम्हारी दृष्टि निशाने पर केंद्रित नहीं है। तुम उसका सिर उड़ा नहीं सकते। तुम जाओ" द्रोण ने कहा।

उन्होंने सबसे यही सवाल किया। सबने धर्मराज का जवाब ही दुहराया।

आख़िर अर्जुन आया और उसने पक्षी को देखा। जब द्रोण ने पूछा कि क्या सब को देख पा रहे हो तो उसने उत्तर दिया कि पक्षी के अलावा मुझे कुछ और दिखायी नहीं दे रहा है।

द्रोण का 'बाण छोड़ो' कहने की देरी थी,

बस, अर्जुन ने अपने बाण से पक्षी का सिर उड़ा दिया। द्रोण के आनंद की सीमा न रही। उसने अर्जुन की हृदयपूर्वक प्रशंसा की और मन ही मन सोचा कि युद्ध में दुर्योधन को कोई जीत सकता है तो वह केवल अर्जुन ही है।

एक बार अपने शिष्य समेत द्रोण यमुना में स्नान करने गया। द्रोण जब स्नान कर रहा था तब एक मगर ने उसकी जाँघ को कसकर पकड़ लिया। वह चिल्लाता रहा कि शिष्यो, अपने बाणों से मगर को मार डालो। सबने बाण चलाये, लेकिन किसी का भी बाण मगर को निशाना नहीं बना सका। उन्हें डर लगा कि बाण शायद गुरु को घायल करेंगे। परंतु अर्जुन ही ऐसा था, जिसने पाँच बाण चलाये और गुरु को घायल किये बिना मगर को मार डाला।

अर्जुन की भरपूर प्रशंसा करते हुए द्रोण ने कहा "अर्जुन, तुम्हारा प्रावीण्य अमोघ है। मैं तुम्हें मंत्र सहित ब्रह्मशिरोनामास्त्र को चलाने का उपदेश दूँगा। उसका प्रयोग मानवातीतों पर ही हो सकता है। साधारण मनुष्य पर उसका प्रयोग करने से भूलोक दग्ध हो जायेगा।"

अर्जुन ने तक्षण ही स्नान किया और द्रोणाचार्य से उस ब्रह्मशिरोनामास्त्र का उपदेश पाया।

एक दिन द्रोण धृतराष्ट्र की सभा में गया। उस समय वहाँ भीष्म, विदुर, कृप, बाह्लिक, सोमदत्त आदि महानुभाव आसीन थे।

द्रोण ने धृतराष्ट्र से कहा "महाराज, सब राजकुमारों ने मुझसे धनुर्विद्या की शिक्षा पायी। आप उनके प्रावीण्य की परीक्षा लीजिये।"

स्थानों पर आसीन हुए तब द्रोण अपने पुत्र अश्वथ्यामा के साथ आया और रंगस्थल के बीच खड़ा हो गया। उसके सब शिष्य खड्ग, ढ़ाल, धनुष, बाण आदि हथियारों से लैस थे। उनमें उत्साह उमड़ रहा था। पहले धर्मराज और फिर बाक़ी सब उसी के पीछे मंच पर आये।

रथों पर आसीन होकर, हाथियों पर बैठकर, घोड़ों पर खड़े होकर सबने अपने-अपने अस्त्रों के कला-कौशल दर्शाये। धनुर्विद्या में अपना सामर्थ्य दिखाया। दर्शकों को भय भी हुआ कि कहीं उन बाणों से वे घायल तो नहीं होंगे। मंच पर जो-जो हो रहा था, उसका सविस्तार विवरण विदुर धृतराष्ट्र को बता रहा था तो कुन्ती गाँधारी को।

धृतराष्ट्र ने द्रोण से कहा "आपने हमारा बड़ा उपकार किया है। आप ही निर्णय कीजिये कि इन बच्चों का विद्या-प्रदर्शन कहाँ हो, और कब हो ? शेष प्रबंध मैं करूँगा।"

इस विद्या-पदर्शन के प्रबंध का भार विदुर को सौंपा गया। प्रबंध बहुत बड़े स्तर पर हुए। अस्त्र-विद्या के प्रदर्शन के लिए एक विशाल स्थल को साफ़ करवाया गया। पथ्थर और झाड़ियाँ हटा दिये गये और भूमि को एकदम समतल बनवा दिया।

एक शुभ मुहूर्त पर प्रदर्शनी का प्रबंध हुआ। राजवंश के सब लोग इस देखने आये। गांधारी, कुन्ती आदि अंत:पुर की स्त्रीयाँ भी वहाँ रथों पर बैठकर आयीं। जब सब लोग अपने-अपने

थोड़ी देर बाद भीम और दुर्योधन अपनी-अपनी गदाओं को लिये मंच पर आये। उन्होंने परस्पर युद्ध करना आरंभ कर दिया। यद्यपि केवल प्रदर्शन के लिए यह युद्ध आयोजित हुआ था, फिर भी कुछ लोग भीम को प्रोत्साहन दे रहे थे तो कुछ लोग दुर्योधन को। वे उन दोनों को भड़काने लगे। द्रोण ने देखा कि यह युद्ध तीव्र रूप धारण कर रहा है तो उसने अश्वथ्यामा को आज्ञा दी कि युद्ध तक्षण रोक दिया जाए।

अब अर्जुन मंच पर आया। उसे देखते ही सभा हर्षध्वनियों से गूँज उठी। धृतराष्ट्र ने विदुर से पूछा "अकस्मात् यह कोलाहल कैसा?" विदुर ने अर्जुन के आगमन की बात बतायी।

अर्जुन ने वर्णनातीत कला-कौशल दिखाया।
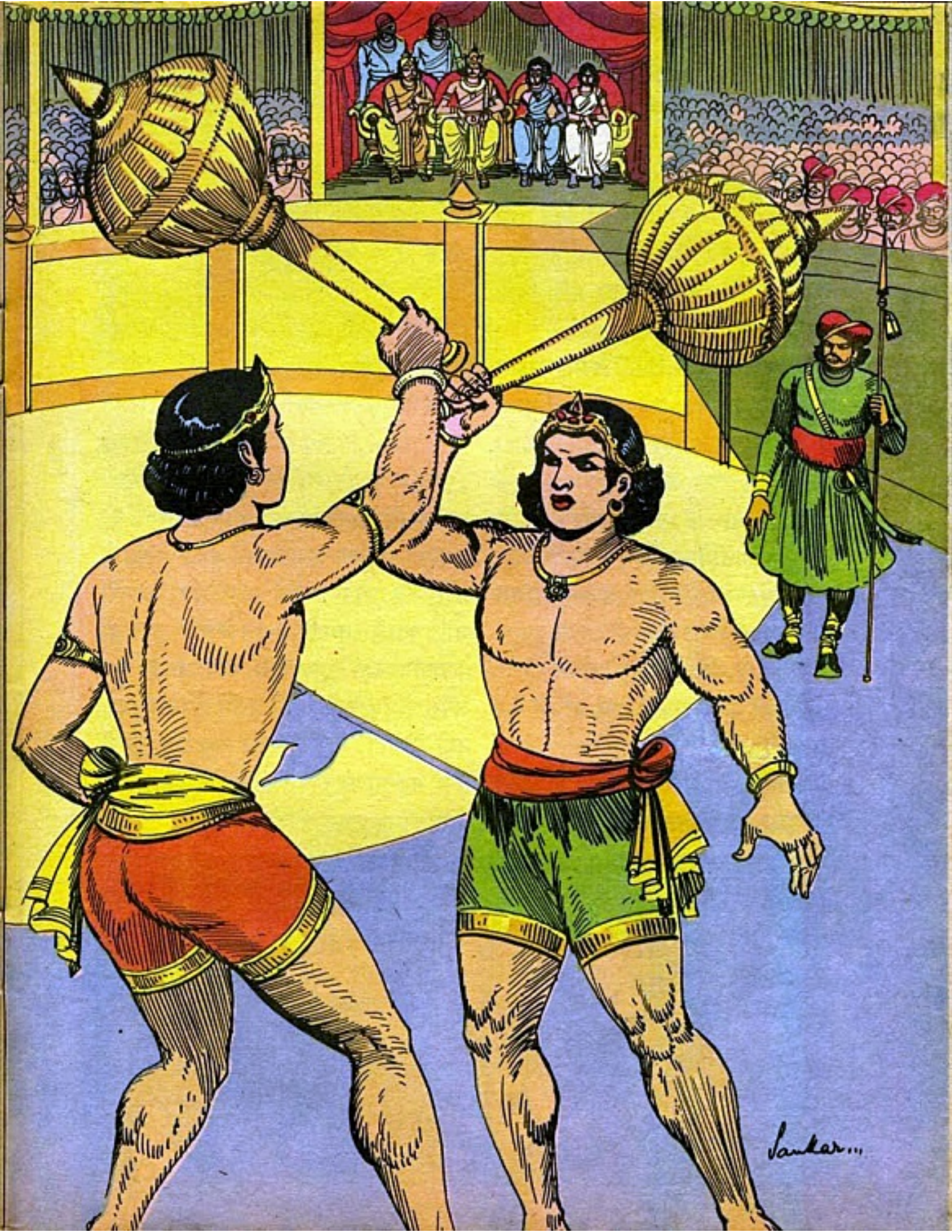
दिव्य अस्त्रों का प्रयोग करके उसने अग्नि, मेघ आदि की सृष्टि की। एक शस्त्र का प्रयोग करके स्वयं अंतर्धान हो गया। उसकी लक्ष्य-सिद्धि अमोघ थी। सुवर का एक पुतला गोलाकार में घूम रहा था। अर्जुन ने एक ही दफ़े पाँच बाण बरसाये और उसके मुख को छिन्नाभिन्न कर दिया। गाय की सींग में इक्कीस बाण बिना निशाना छूटे घुसेड़ दिया।

जब सब बालकों ने अपना कला-कौशल दिखाया और लौट पड़े, तब कर्ण अपने सहज कवच-कुंडल के साथ मंच पर आया। उसका मुख बालसूर्य की तरह दीप्त हो रहा था। उसके हाथ में धनुष-बाण थे। उसने द्रोणाचार्य और कृपाचार्य को सविनय प्रणाम किया और गंभीर स्वर में गर्जना की "अरे अर्जुन, यह मत समझना कि धनुर्विद्या में तुम्हीं अकेले प्रवीण हो, असमान हो, अद्वितीय हो। तुमने जिन-जिन विद्याओं का प्रदर्शन किया, मैं भी कर सकता हूँ।"

कर्ण की रोष भरी इन बातों से अर्जुन क्रोधित हुआ, अपमानित हुआ। दर्शकों में अब कुतूहल जगा कि आगे क्या होगा? कर्ण ने सचमुच ही उन सब विद्याओं का प्रदर्शन किया, जिन्हें अर्जुन दिखा चुका था। तक्षण दुर्योधन और उसके सहोदर मंच पर दौड़े-दौड़े आये और कर्ण से गले मिले। उसे बधाई दी और आलिंगन में लेकर दुर्योधन ने कर्ण से कहा 'आज से तुम मेरे निकट मित्र हो, आप्त हो, हममें से एक हो। हमारे शत्रुओं का नाश करने में हमारी सहायता करो।"

कर्ण ने उनकी प्रार्थना स्वीकार की। उसने द्रोणाचार्य से विनती कि मुझे और अर्जुन को द्वंदयुद्ध करने की अनुमति दें। अर्जुन ने उसकी चुनौती सहर्ष स्वीकार की। अपने दोनों पुत्रों को युद्ध में भाग लेता हुआ देखकर कुन्ती मूर्छित हो गयी। तब कृप ने कर्ण से पूछा "पुत्र, तुम्हारी जाति क्या है? तुम किस कुल के हो? तुम कहाँ के रहनेवाले हो? तुम्हारे माँ-बाप कौन हैं? तुम अगर क्षत्रिय नहीं हो तो अर्जुन तुमसे द्वंद्वयुद्ध नहीं करेगा।" कर्ण उनका नाम बता देने से लज्जा महसूस कर रहा था, जिन्होंने उसे पाला-पोसा।
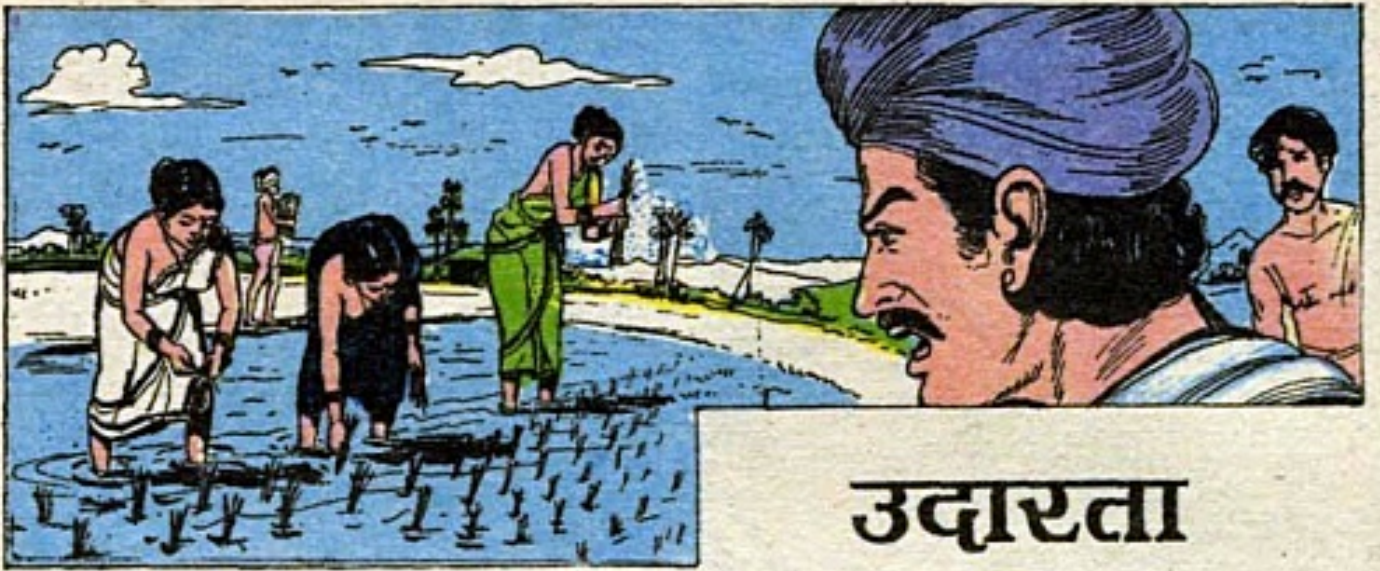
उदारता

कीर्तनपुर गांव में कर्मचंद नामक एक धनिक किसान था। अपने धन-दर्प के नशे में कर्मचंद्र अपने नौकरों से बहुत बुरी तरह से पेश आता था और उनको जब देखो, कोसता रहता था।

कर्मचंद्र के तीन बेटे थे। उनका पहला और दूसरा बेटा अपने पिता का कहा सुनते और करते। यों वे पिता के सही वारिस माने जाने लगे। किन्तु तीसरा बेटा रामचंद्र स्वभाव से अपने पिता के बिल्कुल विपरीत था।

"अपना पेट भरने के लिए नौकर हमारी सेवा जी-जान से कर रहे हैं। उनका आदर करने पर ही वे भी हमारी भलाई चाहेंगे। हममें यजमान होने के नाते अहंकार नहीं होना चाहिये। समय ने हमारा साथ नहीं दिया तो हो सकता है, हमें भी कष्ट झेलने पडें, दरिद्रता का अनुभव करना पडे। हमारा आज का यह दुर्व्यवहार हमें और भी यातनाओं में ड़ाल देगा। सबका आदर करने की प्रकृति हमें उन तक़लीफ़ों के दिनों में बचायेगी, हमारी रक्षा करेगी और हमारी सहायता करेगी।" यों कहा करता था उसका तीसरा बेटा रामचंद्र।

जब कभी उसके पिता और उसके भाई उसकी बातें सुनते तो नित्संकोच उससे कहते "नौकरों को काबू में रखना चाहिये। उन्हें अपनी सीमाओं से बाहर जाने नहीं देना चाहिये। जहाँ वे हैं, वहीं उन्हें रहने देना चाहिये। अथवा हमारा पतन निश्चित है।" वे यों उसे सावधान करते थे। उसे चेतावनी देते थे। वे उससे कहा भी करते थे कि "जब तक हमारे पास धन है, तब तक ये लोग विनय का नाटक करते रहेंगे। उनके दिलों में हमारे प्रति आदर की जो भावना है, वह हमारे धन के कारण है। धन ही हमारा सच्चा बल है। उनपर अनावश्यक ही सहानुभूति दिखाकर अपनी बेवकूफी जता रहे हो। इनका साथ देकर इनको प्रोत्साहन देकर, इनकी सहायता करकेतुम अपने लिए गढ़ा खोद रहेहो।"

माणिकचंद

कर्मचंद के पास गोपी नामक एक नौकर था। उस का दूर का रिश्तेदार मर गया था। मरते-मरते उसने अपनी एक एकड़ की ज़मीन गोपी को दी। उसने कर्मचंद को यह बात बतायी और कहा ''मालिक, आपका नमक खाया है मैंने। अगर आप इज़ाज़त देंगे तो अपने परिवार के साथ मैं उस गाँव में जाकर बसूँगा, खेती करूँगा और जीविका चलाऊँगा।'' कर्मचंद उसे ईर्ष्या भरी नज़रों से देखता हुआ बोला ''आख़िर तुम्हें मिली है, एक एकड़ की ज़मीन। इस थोड़ी-सी ज़मीन से तुम्हें मिलेगा क्या? क्या भूल गये कि तुम मेरे यहाँ नौकर हो और इसके कुछ नियम भी हैं। अगली एकदशी तक शर्त के मुताबिक़ तुझे मेरे यहाँ काम करना होगा। अभी अब दो और महीने बाक़ी हैं। तुम्हें इन दो महीनों तक मेरे यहाँ काम पर रहना होगा। अगर इस शर्त का उल्लंधन करना चाहते हो तो पहले ही तुमने मुझसे जो अनाज लिया था, उसे वापस लौटाओ। नौकरों को बीच में ही चले जाने की अनुमति मैं दे दूँ तो गांव के बाक़ी किसान मुझपर नाराज़ होंगे''। गोपी इस नित्सहाय स्थिति में बाक़ी दो महीने भी नौकरी करता रहा। मियाद पूरी हो जाने के बाद, मालिक की अनुमति पाकर, अपने परिवार सहित दूसरा गाँव चला गया। वहाँ अपनी खेती में लग गया।

जब वह नौकर था, तब गोपी कुछ बचा नहीं पाया। जो मिलता था, उससे परिवार चलाना ही मुश्किल पड़ता था। इसलिए खेती करने के लिए उसे कर्ज़ लेना पड़ा। उसकी यह हालत देखकर एक किसान ने उससे कहा ''गोपी, आधे एकड़ में तुम खेती करो। बाक़ी आधे एकड़ में मैं खेती करूँगा। उसके लिए जो खर्चा होगा, मैं उठाऊँगा। जो बचेगा, उसमें से दोनों आधा-आधा बाँट लेंगे। इससे तुम्हें अपनी खेती के लिए भी आवश्यक रक़म मिलेगी''।

गोपी को यह उपयोगी सिद्ध हुआ। उसे अपनी खेती के लिए कर्ज़ लेने की ज़रूरत नहीं पड़ी और वह आराम से अपनी ज़िन्दगी गुज़ारने लगा।

इस स्थिति में गोपी ने अपनी बेटी की शादी का रिश्ता भी पक्का कर लिया। वह खुद कर्मचंद के पास गया और उसे अपनी बेटी की शादी पर

आने का निमंत्रण दिया। कर्मचंद और उसके दोनों बेटों ने उसके निमंत्रण का मज़ाक उड़ाया, पर तीसरा बेटा रामचंद्र उससे अलग मिला और कहा "गोपी, बहुत समय तक तुमने हमारे यहाँ ईमानादारी से काम किया है। तुम तो जानते ही हो कि मैं पिता पर निर्भर पुत्र हूँ। इस स्थिति में मैं एक रूपया भी दे नहीं रहा हूँ, जिसका मुझे बहुत दुख है। परंतु मैं तुम्हारी बेटी की शादी पर अवश्य ही आऊँगा"।

बाप और भाइयों ने रामचंद्र का मज़ाक उड़ाया, फिर भी वह गोपी की बेटी की शादी के अवसर पर उसके यहाँ गया। उस समय, गोपी का भागीदार किसान अचानक मर गया। वह वादा कर चुका था, शादी के दिन तुम्हें जो धन मिलना है, दूँगा। उस किसान की आकस्मिक मृत्यु के कारण उस किसान का परिवार शोक-सागर में डूबा हुआ था। गोपी इस हालत में चाहता नहीं था कि उनपर दबाव डालूँ और अपनी रक़म लूँ।

ठीक शादी के वक़्त दुल्हेवालों ने दहेज की मांग की। रामचंद्र ने दुल्हे के पिता को परिस्थिति समझायी। फिर भी वह टस से मस ना हुआ। उसने साफ़ कह दिया "कौन जानता है कि इसके भागीदार ने इसे पैसे नहीं दिये या दिये? हाँ, एक काम कीजिये। उस आधे एकड़ की ज़मीन मेरे बेटे के नाम लिखवा दीजिये। ऐसा नहीं हुआ तो यह शादी नहीं होगी"।

गोपी आधे एकड़ की ज़मीन दुल्हे के नाम कर देने के लिए तैयार हुआ। लेकिन उसकी बेटी सुभाषिणी ने इस प्रस्ताव को अस्वीकार

कर दिया और कहा "होनेवाले अपने समधी की बात पर विश्वास ना रखनेवाले उन लोगों का मैं कैसे विश्वास करूँ? मैं यह शादी नहीं करूँगी। मुझे यह रिश्ता पसंद नहीं। वे लोग पैसों के पीछे पागल लगते हैं"। दुल्हन की इन बातोंसे दुल्हेवाले भड़क उठे। उन्होंने कहा "एक अविवाहित कन्या को इतना घमंड शोभा नहीं देता। अगर शादी ही करनी है तो कर ले, उससे, जो एक दमड़ी भी नहीं लेता"।

दुल्हेवालों को जाते हुए देखकर गोपी निराश हो गया। उसका मुँह खुला का खुला रह गया। तब रामचंद्र ने उससे कहा "मैं बचपन से ही इन्सानों की अच्छाइयों का तरफ़दार हूँ। मैने कभी भी अमीर और ग़रीब का फ़रक़ नहीं जाना। तुम्हारी बेटी सुभाषिणी को उसके बचपन से ही जानता हूँ। मुझे उसका स्वाभिमान बहुत अच्छा लगा। तुम्हें एतराज़ ना हो तो इसी मुहूर्त पर मैं तुम्हारी बेटी से शादी करूँगा। मैं हर तक़लीफ का सामना करने तैयार हूँ।"

गोपन्ना को तो मालूम है कि रामचंद्र का पिता बहुत ही अमीर है। इसलिए उसने इस शादी से साफ़ इनकार कर दिया। तब रामचंद्र ने उसे समझाया "ठीक मुहूर्त के अवसरपर तुम्हारी बेटी की शादी रुक गयी है, इसलिए उससे विवाह करने कोई भी आगे नहीं बढ़ेगा। मेरे लोगों की चिंता मत करो। मैं उन्हें समझा लूँगा। इस शादी के लिए मान जाओ"।

गोपन्ना को इस शादी के लिए अपनी स्वीकृति देनी ही पड़ी। यों निश्चित मुहूर्त पर रामचंद्र और सुभाषिणी का विवाह संपन्न हुआ।

पत्नी समेत घर आये रामचंद्र पर उसका पिता बहुत ही क्रोधित हुआ। उसके भाइयों ने उसकी भत्सना की। खूब सोच-विचार के बाद कर्मचंद ने रामचंद्र से कहा "जो हो गया, सो हो गया। आख़िर तुम मेरे बेटे ठहरे, मैं तुम्हें थोड़ा-सा धन देता हूँ। अगर तुम चाहते हो कि मैं इस गाँव में इज्ज़त के साथ जीऊँ, तो अपनी पत्नी को लेकर किसी दूसरे गाँव में चले जाना।"

रामचंद्र पिता का दिया हुआ धन लेकर अपनी पत्नी के गाँव आया। वहाँ खेती के लिए थोड़ी ज़मीन ली और उस धन से खेती के कामों में जुट गया। चार सालों के अंदर उसने पांच

एकड़ खेत खरीद भी लिया।

एक बार वर्षा ऋतु में तूफ़ान आया, समुद्र उमड़ पड़ा, जिससे गाँव के सारे खेत नमकीन पानी से भर गये। पूरी फ़सल बरबाद हो गयी। कर्मचंद के खेत भी किसी काम के नहीं रहे। चार-पांच सालों तक उनमें फ़सलें होने की भी कोई गुंजाइश नहीं। गाँव में भूस्वामी कर्मचंद और नौकरों में कोई फरक़ नहीं रह गया। सब लोग अपने-अपने गाँवों से दूसरे गाँवों में जाने लगे, जहाँ इस उपद्रव का कोई असर नहीं पड़ा।

रामचंद्र को जैसे ही यह मालूम हुआ, उसने अपने गाँव के कुछ लोगों को अपने यहाँ आश्रय दिया। उनकी भरसक सहायता की। उसे मालूम भी हुआ कि उसके पिता और भाई गाँव छोड़कर कहीं दूर चले गये हैं। वह उन्हें ढूँढ़ने निकल पड़ा। साथ उसके, गोपी और पत्नी भी थे।

गाँव की सरहदों पर उन्होंने देखा कि उसके पिता और भाई असहाय स्थिति में निराश, भूखे बैठे हुए हैं। पहने कपड़ों के अलावा उनके पास और कुछ है ही नहीं। अपने बेटे और बहू को देखकर कर्मचंद की आँखों में आँसू आ गये।

रामचंद्र ने अपने पिता के हाथ को अपने हाथों में लिया और कहा "चिंतित और दुखी होने की कोई ज़रूरत नहीं। जहाँ फूल होते हैं, वहाँ काँटे भी होते हैं। नमकीन पानी से भरे खेतों में चार-पांच सालों तक कृषि नहीं कर पायेंगे। तब तक हम लोग मिल-जुलकर अपने यहाँ खेती करेंगे। फ़सल उगाएँगे। हममें ना ही कोई मालिक है या ना ही कोई नौकर।"

उसकी पत्नी और गोपी ने अपने सिर हिलाते हुए सूचित किया कि हम भी यही चाहते हैं, हमारी भी यही इच्छा है।

रामचंद्र की अच्छाई से उसके पिता और भाई बहुत प्रसन्न हुए। उसी क्षण स्वार्थपूर्ण विचारों को त्याग दिया। उनमें ग़रीबों की प्रति जो बुरी भावना थी, दूर हो गयी। उनकी अब समझ में आ गया कि धन ही सब कुछ नहीं होता। सहृदयता, प्रेम, पारस्परिक आदर जैसे सदगुणों से ही मनुष्य-सुखी सह सकता है। ऊँच-नीच की भावना केवल अज्ञान और अहंकार मात्र है। रामचंद्र की सहायता से उन्होंने नये जीवन का श्रीगणेश किया।

दुराशा

वह ग़रीब था। वह दाने दाने का मोहताज था। आसपास के सब गाँवों में जाता और भीख माँगकर अपना पेट भरता था। खेतों में जो काम करते, वे खाते और बचा-खुचा उसे देते थे। अलावा इसके, उसे और कुछ नहीं मिलता था। घरों में जाता तो कुत्ते भूँकते और उसे भगाते। वहाँ उसे कुछ भी मिलता नहीं ता। कभी-कभी उसे हफ्ते भर खाने को कुछ नहीं मिलता।

इस साल भी उस भिगमंगे की वही बुरी हालत रही। जब लगातार दो दिनों तक उसे खाने को कुछ नहीं मिला तो उसने एक गाँव छोड़ गया और दूसरे गांव में गया। रास्ते में एक बूढ़े से उसकी मुलाक़ात हुई। उसने कहा "तुम्हें देखकर दया आती है। तुम्हारा पेट तो एकदम अंदर धंस गया है। लो यह चना।" कहते हुए उस बूढ़े ने एक मात्र चना उसे दिया। भिखारी ने पूछा "इस चने से मेरा पेट कैसे भरेगा?"

"इसे खा जाने से तुम्हारा कोई लाभ नहीं होगा। अगर यह तेरे पास हो तो हर कोई तुम्हें आतिथ्य देगा। तब तुम्हें इस तरह से भूखा रहने की ज़रूरत नहीं पड़ेगी"। बूढ़े ने कहा।

फिर दोनों अपनी-अपनी दिशा में चले गये। अंधेरा होते-होते भिखारी गाँव में पहुंचा। एक घर के सामने जाकर वह चिल्लाने लगा "मालिक, भूखा हूँ, खाने के लिए कुछ देना।"

घर का मालिक तुरंत बाहर आया। उसने भिखारी को देखा। देखा कि वह इस गाँव का नहीं है तो वह उसे अंदर ले गया। उसे पेट भर खिलाया। उसने भिखारी से कहा "आज रात को घर के चबूतरे पर सो जाओ। इस अंधेरे में जाओगे भी कहाँ?"

भिखारी बहुत खुश हुआ। आज तक किसी ने भी उसका इतना आदर नहीं किया। उसने सोचा कि यह सब उस चने की ही महिमा है। उसने उस चने को सावधानी से सरहाने रखा और आराम से सो गया।

पचीस वर्ष पूर्व 'चन्दामामा' में प्रकाशित कहानी

सबेरे-सबेरे घरवालों की मुर्गी भिखारी के पास आयी। उसके आने से भिखारी की नींद में ख़लल पहुँची। वह उठ बैठा। इतने में उसने देखा कि मुर्गी ने चने को अपने मुँह में डाल लिया। भिखारी चिल्ला उठा "बाप रे, मेरे चने को मुर्गी ने खा लिया है"।

घर का मालिक बाहर आया और जब उसे बात मालूम हुई तो उसने कहा "एक चने के लिए इतना शोर क्यों मचा रहे हो? जितने चने चाहो, ले जाओ"।

"मुझे बहुत चने नहीं चाहिये। मुझे मेरा वह चना ही चाहिये। उसीमें मेरा भाग्य है। वह एक सिद्ध पुरुष का दिया हुआ चना है" भिखारी ने ज़ोर देते हुए कहा। "तो मैं क्या करूँ? चना तो मुर्गी के पेट में चला गया है। चाहो तो वह मुर्गी ले जाओ" घर के मालिक ने कहा।

भिखारी ने सोचा कि मुर्गी को शहर ले जाकर बेचने से तगड़ी रक़म मिलेगी। वह मुर्गी को लेकर शहर की ओर चल पड़ा। वह उस दिन शहर पहुँच नहीं पाया। इसलिये रास्ते में पड़नेवाले एक गाँव में वह ठहर गया। उसने एक आसामी से विनती की कि आज रात को मुझे आपके यहाँ ठहरने की अनुमति दीजिये। आसामी ने उसपर तरस खाकर खाना भी खिलाया और सोने के लिए जगह भी दी। मुर्गी को बग़ल में ही रखकर वह सो गया। जैसे ही वह सो गया, मुर्गी वहाँ से भाग गयी और घर में जो और मुर्गी और मुर्गियाँ थीं, उनसे झगड़ा मोल

लिया। वे सब इकट्ठे हो गये और भिखारी की मुर्गी को वहाँ से खदेड़ना शुरु किया। मुर्गी ने उनसे अपने को किसी तरह बचा लिया और दौड़ती-दौड़ती एक बछिया के पैरों के नीचे आकर मर गयी।

"मैं लुट गया, मैं बरबाद हो गया। मेरी सोने की मुर्गी" कहकर भिखारी ज़ोर-ज़ोर से रोने लगा। घर के मालिक ने अपनी दो मुर्गियों को देने का वादा किया, लेकिन भिखारी ने इनकार कर दिया। उसने कहा कि मुझे बछिया चाहिये, जिसके पैरों के नीचे आकर मेरी मुर्गी मर गयी। आसामी को उसकी मांग स्वीकार करनी पड़ी। भिखारी बछिये को लेकर शहर की ओर चल पड़ा। शहर में पहुँचते-पहुँचते अंधेरा

छा चुका था। शहर के बाहर ही उसने एक घर देखा, जहाँ पहुँचकर उसने उस गृहस्थी से कहा "महाशय, बड़ी दूरी से आ रहा हूँ। इस शहर में मेरी जान-पहचान के कोई नहीं हैं। क्या आज रात मुझे यहाँ ठहरने की अनुमति देंगे?" गृहस्थी ने अनुमति दी।

उस दिन गृहस्थी के घर में कोई शुभ कार्य संपन्न हो रहा था। इस अवसर पर बहुत से रिश्तेदार आये हुए थे। वहाँ बहुत बड़ा भोज भी हुआ। भिखारी ने भी उनके साथ-साथ भरपेट खाया। आधी रात को बछिये ने रस्सी तोड़ डाली और घरवालों के घोड़े के पास दौड़ी आयी। वहाँ पहुँचकर घास चरने लगी। घोड़ा नाराज़ हुआ और उसने अपने पैरों से उसे ऐसी लात मारी कि बछिया वहीं की वहीं मर गयी।

दूसरे दिन भिखारी ने गृहस्थी से झगड़ा मोल लिया। गृहस्थी कोमल स्वभाव का था, सौम्य था। वह नहीं चाहता था कि घर आये मेहमानों के सामने एक अपरिचित व्यक्ति उसका अपमान करे, झगड़ा मोल ले, बखेड़ा खड़ा कर दे, इसलिए उसने चुपचाप अपना घोड़ा भिखारी को दे दिया।

भिखारी घोड़े पर बैठा शहर की ओर निकल पड़ा। उसने अपने आप सोचा "अब मेरे अच्छे दिन आ गये हैं। मेरा भाग्य चमक रहा है। बुड्ढे का दिया हुआ चना बहुत ही महिमावान है। लेकिन गधा और घोड़ों को कमाने से क्या होगा। इस बार तो अच्छा घर, सुंदर पत्नी और थोड़ी-बहुत जायदाद कमाऊँगा। यह घूमना-फिरना छोड़ दूँगा और कहीं हमेशा के लिए बस जाऊँगा"।

शाम तक वह शहर पहुँच गया। गली से जब वह गुज़र रहा था, तो उसने एक बड़ी सराय देखी और देखी उसके सामने ही एक सुंदर लड़की को। उस लड़की को देखा तो उसे लगा कि ऐसी लड़की मेरी पत्नी बने तो कितना अच्छा होगा। इसलिए वह घोड़े से उतरा और सराय के अंदर गया। उसने गुमाश्ते से बात की और एक कमरा लिया।

भिखारी ने जिस लड़की को देखा था, वह गुमाश्ते की बेटी थी। वह गुमाश्ते की इकलौती संतान थी। उसने सोचा कि इससे शादी कर लूँ तो इसी सराय में रह जाऊँगा। यों उसके घर का,

पत्नी का और भोजन का इंतज़ाम आप ही आप हो जाएगा। आराम से जीवन गुज़ार पाऊँगा।

सराय के कमरे में प्रवेश करते हुए उसने गुमाश्ते से कहा "साहब, मेरे घोड़े की देखभाल ठीक तरह से कीजिये। उसे समय पर पानी पिलाइये और चारा खिलाइये। यह घोड़ा बहुत ही क़ीमती घोड़ा है। याद रखियेगा कि यह कोई मामूली घोड़ा नहीं है"।

यजमान ने अपने घोड़े के बारे में इतना सब कुछ कहा, इसलिए गुमाश्ता खुद घोड़े को पानी पिलाने ले गया। वह पीता रहा और जैसे ही उसने देखा कि गुमाश्ते की नज़र कहीं और है तो वह वहाँ से भाग निकला। गुमाश्ते ने भिखारी के पास आकर यह समाचार सुनाया। भिखारी ने आग बबूला होकर कर्कश स्वर में कहा "मैं तुमसे पहले ही कह चुका हूँ कि मेरे घोड़े की देखभाल ठीक तरह से करना। ऐसी लापरवाही? तुम भला क्या जानो कि वह घोड़ा कितना क़ीमती है। तुरंत मेरा घोड़ा मुझे लौटा दो।"

"आप बेफ़िक्र रहिये। सबेरा होते-होते आपका घोड़ा आपको सौंपूंगा, चाहे मुझे इसके लिए कितनी भी मेहनत करनी पड़े।" गुमाश्ते ने बड़े ही दीन स्वर में कहा। उसकी बातों से भिखारी चौंक उठा। उसने सोचा कि अगर सबेरे तक का समय इसे दिया जो तो हो सकता है, घोड़ा पकड़कर ले आये। उसे तो गुमाश्ते को किसी तरब फँसाना था और उसकी बेटी से
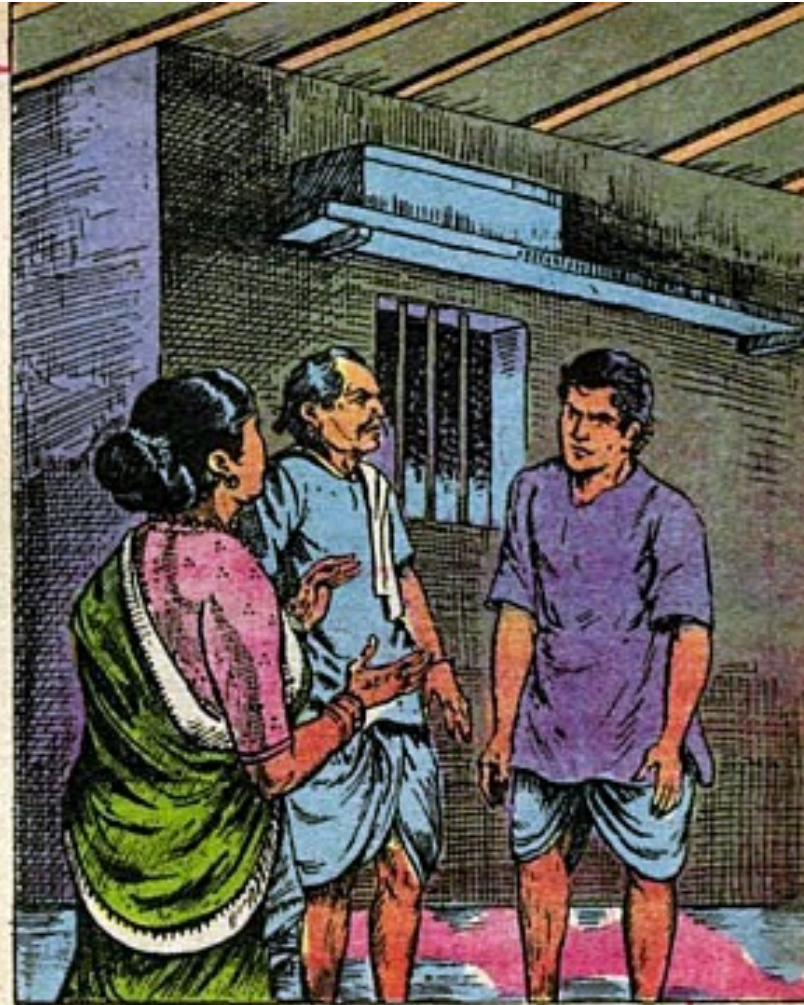
शादी करनी थी। उसे इसके लिए विवश करना था। इसलिए सख्ती से बरतने का फैसला किया।

"तुम्हारी बेटी दिखाई नहीं पड़ेगी तो क्या सबेरे तक इंतज़ार करोगे? वह घोड़ा मेरे लिए तो उससे कहीं लाख गुना बढ़कर है"। नाराज़ होते हुए भिखारी ने कहा।

"आप ही बोलिये, इस आधी रात के समय मैं क्या करूँ?" गुमाश्ता चिढ़ता हुआ बोला।

"तुम्हारी लापरवाही की वजह से मेरा घोड़ा भाग गया है। उसके बदले मुझे तुम अपनी बेटी देना।" भिखारी ने माँग की।

गुमाश्ता नाराज़ हो उठा। दोनों आपस में तू तू मैं मैं करने लगे। इतने में गुमाश्ते की पत्नी आयी और उसने अपने पति से कहा "ग़लती

आपकी है। आप चुप रहिये। बिटिया मान जायेगी तो ऐसा ही करेंगे, जैसा ये चाहते हैं। किसी ना किसी दिन तो उसे पराये को सौंपना ही तो है। हम चाहें भी तो इनसे अच्छा दामाद नहीं मिलेगा। मैं अभी पता लगाती हूँ कि बेटी की क्या राय है?'' उसकी बातें सुनकर भिखारी को लगा कि उसकी चाल क़ामयाब हो गयी है और उसका सपना पूरा होनेवाला है।

थोड़ी ही देर में गुमाश्ते की पत्नी दौड़ी-दौड़ी आयी और बोली ''मेरी बेटी आपसे शादी करने बिल्कुल तैयार नहीं है। इसलिये मैंने उसे एक बोरे में बंद रखा है। आप उस बोरे को लेकर तुरंत यहाँ से निकल जाइये और बहुत दूर चले जाइये। सबेरे बोरा खोलने के बाद उसे मालूम भी नहीं पड़ेगा कि वह कहाँ है और कैसे यहाँ आयी है। वह घर भी वापस नहीं आ पायेगी। तब आप उसे समझाइये, डराइये, जैसा भी हो, उसे शादी के लिए मना लीजिये।'' भिखारी ने सोचा तक नहीं था कि ऐसा भी हो सकता है। फिर भी उसे लगा कि गुमाश्ते की पत्नी की सलाह सही है।

वह बोरे को ढ़ोता हुआ आधी रात को शहर के बाहर निकल पड़ा। बोरे का वज़न कुछ ख़ास नहीं था, फिर भी उसके अंदर का प्राणी छटपटा रहा था, इसलिए उसे ढ़ोकर ले जाने में दिक्क़त हुई, काफ़ी मेहनत करनी पड़ी। सवेरा होते-होते बड़ी मुश्किल से वह जंगल में पहुँचा।

उसने वहाँ बड़ी आशा लेकर बोरा खोला। उस बोरे से एक कुत्ता कूद पड़ा। उसपर झपट पड़ा और उसकी नाक को घायल करता हुआ तेज़ी से भाग गया।

चना, जो भाग्य उसके लिए ले आया था, अब वह समाप्त हो गया। अब फिर से भीख माँगने के अलावा उसके पास दूसरा और कोई चारा नहीं। कर भी क्या सकता है, गाँव-गाँव में घूमते हुए अब वह भीख माँग रहा है और अपना पेट भर रहा है। प्रयत्न शुद्ध और पवित्र होने चाहिये। नहीं तो नतीजा बुरा और नष्टदायक ही होता है। दुराशा के कारण दूसरों की वस्तु को पाने की बात तो दूर, अपनी वस्तु भी खोनी पड़ती है। बुरी नीयतवाले अपने पैरों पर खुद कुल्हाड़ी मार लेते हैं।

प्रकृति - रूप अनेक

ख़तरनाक मछली

मद्रास नगर के मेरीना समुद्री तट पर मछलियों की जो प्रदर्शनीशाला है, उसमें हाल ही में एक मछली लायी गयी। तितली के समान इसके पंख हैं। पीठ पर बाण जैसे झब्बे हैं। इसके पंख, अन्य समुद्री प्राणियों को समीप आने से डराते हैं। 'रत्सल्स स्कार्पियन फिश' नामक इस मछली के बारे में १९३० में प्रकाशित पुस्तक में लिखा गया था कि यह मछली विषपूरित है। पीठ और पंखों के काँटों से तीव्र रूप से यह घायल करता है। इसलिए उन दिनों यह समुद्री साँप से अधिक ख़तरनाक माना जाता था और लोग इससे बहुत डरते थे। इस प्रकार की मछली समुद्री जल में ही जीवित रह सकती है, इसलिए इसके हौदे को समुद्री जल में बारंबार डुबोते रहते हैं।

भोंकनेवाला हिरन

मद्रास के समीप ही स्थित वंडलूर की जंतु प्रदर्शनीशाला में एक शिशु हिरन का जन्म हुआ। इसकी आँखें बहुत ही सुँदर और फुर्तीली हैं। इसके पास जाने पर कुत्ते की तरह यह भोंकता है। इसलिए इसे भोंकनेवाला हिरन कहते हैं।

सफ़ेद कौआ

क्या सफ़ेद कौव्वे को कभी देखा? जवाब तो यही मिलेगा कि नहीं। तो आप मद्रास के चिल्ड्रन पार्क जाइये। वह वहाँ दिखायी देगा। हल्की लाल आँखें हैं इसकी, दूध की तरह श्वेत दिखायी देगा यह। यह ९० दिनों का शिशु है। पर अक़्सर होते हुए शारीरिक परिवर्तनों के कारण यह बहुत ही छोटा लगता है। कोट्टूर के पेड़ों के बीच जब काले कौव्वों से खदेड़ा जा रहा था, तब इसे किसी ने बचाया और इस पार्क के अधिकारियों को सौंपा।
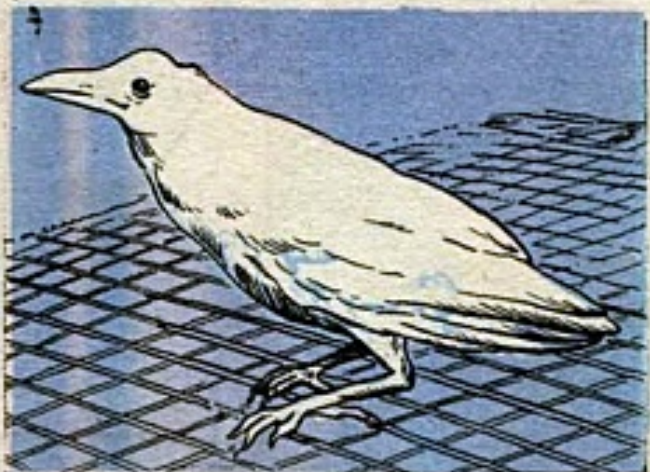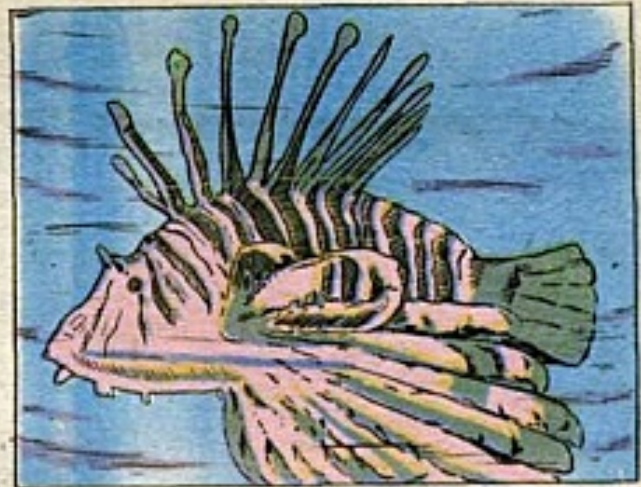
Say "Hello" to text books and friends
'Cause School days are here again
Have a great year and all the best
From Wobbit, Coon and the rest!

SUPER RUBBER
It's time to go back to school again. Time for text books. Time for games. Time to meet old friends. And make new ones. Time to start studying again. Because there's so much to learn about the world around you.
From all of us here at Chandamama, have a great year in school. And remember to tell us what you've learnt everyday, when you come home from school !
THE
CHANDAMAMA
COLLECTION
ARTIG1246

फोटो परिचयोक्ति प्रतियोगिता :: पुरस्कार १००)

पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ, अप्रैल, १९९५ के अंक में प्रकाशित की जाएँगी।

Devidas Kasbekar

B.V. Ravichandran

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ एक शब्द या छोटे वाक्य में हों। ★ १० फरवरी, '९५ तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए। ★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) रु. १००/- का पुरस्कार दिया जायेगा। ★ दोनों परिचयोक्तियाँ केवल कार्ड पर लिखकर इस पते पर भेजें।

चन्दामामा, चन्दामामा फोटो परिचयोक्ति प्रतियोगिता, मद्रास-२६.

दिसंबर, १९९४, की प्रतियोगिता के परिणाम

पहला फोटो : **गये दिन हमारे**

दूसरा फोटो : **आये दिन तुम्हारे**

प्रेषक : **सय्यद जवेद अहमद,**

अवधूत अपार्टमेंट, सनपरा, नई बम्बई.

Printed by B.V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., 188 N.S.K. Salai, Madras 600 026 (India) and Published by B. VISHWANATHA REDDI on behalf of CHANDAMAMA PUBLICATIONS, Chandamama Buildings, Vadapalani, Madras 600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.

अपने प्यारे चहेतें के लिए जो हो दूर सुदूर
है न यहाँ अनोखा उपहार जो होगा प्यार भरपूर

चन्दामामा

प्यारी-प्यारी सी चंदामामा दीजिए उसे उसकी अपनी पसंद की भाषा में—

आसामी, बंगला, अंग्रेजी, गुजराती, हिन्दी, कन्नड
मलयालम, मराठी, उड़िया, संस्कृत, तमिल या तेलुगु

—और घर से अलग कहीं दूर रहे उसे लूटने दीजिए घर की मौज-मस्ती

चन्दे की दरें (वार्षिक)

आस्ट्रेलिया, जापान, मलेशिया और श्रीलंका के लिए

समुद्री जहाज़ से रु. 117.00 वायु सेवा से रु. 264.00

**फ्रान्स, सिंगापुर, यू.के., यू.एस.ए.,
पश्चिम जर्मनी और दूसरे देशों के लिए**

समुद्री जहाज़ से रु. 123.00 वायु सेवा से रु. 264.00

अपने चन्दे की रकम डिमांड ड्रॉफ्ट या मनी ऑर्डर द्वारा
'चन्दामामा पब्लिकेशन्स' के नाम से निम्न पते पर भेजिए:

सर्क्युलेशन मैनेजर, चन्दामामा पब्लिकेशन्स, चन्दामामा बिल्डिंग्स, वडपलनी, मद्रास-६०० ०२६.

जवाब :

१. फूलों की पंखुड़ियां ज्यादा हैं.
२. तोते की चोंच खुली है.
३. तोते की गर्दन पर लाल पट्टी है.
४. लड़की की आंखें खुली हैं.
५. लड़की मुस्कुरा रही है.
६. फ्रॉक पर सितारे बने हैं.
७. लड़की के कंगन पर हीरे जड़े हैं.
८. कुत्ते की जीभ बाहर है.
९. प्लेट पर पारले का नाम लिखा है.
१०. प्लेट में मैंगोबाइट रखी है.